साहित्य-मणि-माला मणि—११

प्रबन्ध-पुष्पाञ्जलि

महावीरप्रसाद द्विवेदी

साहित्य-सदन,
चिरगाँव (झाँसी)

प्रथमावृत्ति

मूल्य

श्री रामकिशोर गुप्त, द्वारा साहित्य प्रेस,
चिरगाँव (झाँसी) में मुद्रित, तथा प्रकाशित ।

निवेदन

उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव पर आज तक अनेक चढ़ाइयाँ हो चुकीं और इस समय भी हो रही हैं। वे प्रदेश कैसे हैं, वहाँ तक जाने में कैसी कैसी कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है। वहाँ का दृश्य कैसा है और वहाँ आज तक कौन कौन यात्री कहाँ तक पहुँचा है, यह सब इस संग्रह के तीन लेखों में वर्णन किया गया है। उससे यात्रियों के अध्यवसाय, श्रमसहिष्णुता, दृढ़प्रतिज्ञा आदि का ज्ञान होने के सिवा ध्रुव प्रदेशों के कौतुकावह दृश्यों और भीषण कष्टों का भी बहुत कुछ वृत्तान्त ज्ञात हो सकता है।

प्रकृति कभी कभी कितने संहारकारी खेल खेलती है, यह बात विसूवियस नामक ज्वालागर्भ पर्वत के स्फोटों के वर्णन से अच्छी तरह ध्यान में आ सकती है। सैकड़ों, हजारों वर्ष के परिश्रम से मनुष्य जिन नगरों को जन्म देता और नाना प्रकार के शृङ्गारों से उनकी शोभा बढ़ाता है उन्हें प्रकृति देवी घड़ी ही दो घड़ी में समूल नष्ट कर देती है। इस प्रकार मानों वह मनुष्यों को उनकी क्षुद्रता का पाठ पढ़ाने की कृपा करती है। ऐसी घटनाओं से मनुष्य-समुदाय, चाहे तो, बहुत कुछ सीख सकता है।

शिक्षा का विषय जितना ही गहन है, उतना ही उपयोगी और महत्वपूर्ण भी है। अमेरिका और योरुप में इस विषय पर बहुत कुछ ग्रन्थरचना हुई है। हर्बर्ट स्पेन्सर नाम के तत्ववेत्ता ने इस सम्बन्ध में जो कुछ लिखा है, उसके लेख का सारांश इस संग्रह के पहले लेख में दिया गया है। अतएव जिन्हें इस विषय की पुस्तकें पढ़ने के लिए प्राप्त न हों वे इसकी कितनी ही मुख्य मुख्य बातें इस लेख से जान सकते हैं।

मनुष्य-गणना से देश की उन्नति या अनुन्नति का जो ज्ञान प्राप्त हो सकता है, उसका नमूना लेख नंबर २ में देखने को मिलेगा। उससे यह भी मालूम हो जायगा कि, समय समय पर मनुष्य-गणना करना कितने महत्त्व का काम है।

जङ्गली हाथी, इस देश में, अब भी बहुत पाये जाते हैं। अपने प्रान्त की रियासत बलरामपुर के जङ्गलों में भी वे स्वतन्त्रता-पूर्वक घूमा करते हैं। वे किस तरह पकड़े और पाले जाते हैं, इसका वर्णन भी इस संग्रह के एक लेख में पढ़ने को मिलेगा। उससे ओर कुछ नहीं तो कौतूहल की उद्दीप्ति तो अवश्य ही हो सकती है।

युद्ध के समय, युद्ध लग्न और निरपेक्ष देशों को किन किन नियमों का पालन करना पड़ता है, इसका भी वर्णन इस पुस्तक के एक लेख में पढ़ने को मिलेगा।

दौलतपुर, रायबरेली—
३ जून १९२९

महावीरप्रसाद द्विवेदी

विषय-सूची

प्रबन्ध-पुष्पाञ्जलि

शिक्षा

माँ-बाप का कर्तव्य

[१]

इंगलेंड में स्पेन्सर साहब एक नामी तत्त्ववेत्ता हो गये हैं। उनकी शिकायत है कि लोग उपयोगिता का कम ख़याल करते हैं, दिखाव का अधिक। शिक्षा के विषय में भी यही बात पाई जाती है। जैसी शिक्षा होती आई है वैसी ही लोग अपने बाल-बच्चों को देते हैं। यह सिर्फ़ इसलिए कि और लोग उनकी सन्तति की प्रशंसा करें और उन्हें शिक्षित समझें। पर इस बात का लोग ख़याल नहीं करते कि जो शिक्षा मिल रही है उससे काम कितना निकलता है। स्पेन्सर ने वैज्ञानिक शिक्षा को प्रधानता दी है और बतलाया है कि बिना इसके आदमी कोई काम—कोई

उद्योग-धन्धा—अच्छी तरह नहीं कर सकता। इसलिए विज्ञान-शिक्षा की ओर अधिक ध्यान देना चाहिए।

महत्व के अनुसार मनुष्य के कर्तव्य पाँच हिस्सों में बाँटे जा सकते हैं। उनका क्रम इस प्रकार है—

(१) अपनी प्राणरक्षा के कर्तव्य।

(२) अपने जीवन-निर्वाह के कर्तव्य।

(३) सन्तति को पालने-पोषने और शिक्षा देने के कर्तव्य।

(४) सामाजिक और राजनैतिक कर्तव्य।

(५) मनोरञ्जन—अर्थात् गाने-बजाने, कविता करने और दिल बहलाने आदि के कर्तव्य।

ये जितने कर्तव्य हैं सब के लिए जुदा जुदा तरह की शिक्षा दरकार होती है। और हर तरह की शिक्षा में प्रायः विज्ञान ही (Science) प्रधान है। इस बात को स्पेन्सर ने बड़ी ही योग्यता से सिद्ध किया है। पहले हम तीसरे प्रकार के कर्तव्यों की शिक्षा के विषय में उसका मत लिखते हैं। यह कर्तव्य बाल-बच्चों को पालने, पोसने और शिक्षा देने से सम्बन्ध रखता है।

यह कर्तव्य बहुत बड़े महत्व का है; पर इसके महत्व का कोई ख़याल नहीं करता—इसको पूरा करने के लिए कोई तैयार नहीं रहता। कल्पना कीजिए कि किसी अघटित घटना के कारण, भविष्यत् में होने वाले हमारे वंशजों तक

स्कूली किताबों के एक ढेर और परीक्षा-प्रश्नों के परचों के एक विशाल बण्डल के सिवा, हमारी ओर कोई यादगार नहीं पहुँची । इस दशा में यदि उस जमाने का कोई पुरा-तत्व वेत्ता इन किताबों और परचों की जाँच करेगा तो उसे यह देख कर कितना आश्चर्य होगा कि जिन विद्यार्थियों के ये परचे और पुस्तकें हैं वे क्या आमरण ब्रह्मचारी बने रहने के लिए तैयार हो रहे थे ? क्या वे गृहस्थ होकर बाल बच्चेदार होने की इच्छा नहीं रखते थे ? यदि रखते थे तो फिर क्यों इन पुस्तकों और परचों में बच्चों के पालन-पोषण से सम्बन्ध रखने वाली बातों का कोई जिक्र नहीं ? उसे यह दृढ़ विश्वास हो जायगा कि इन बच्चों या नवयुवकों ने मरण पर्यन्त विवाह न करने का प्रण किया था । अन्त में वह अपने सिद्धान्त इस तरह निश्चित करेगा—

"इन लोगों ने बहुत से विषयों को सीखने की खूब तैयारी की थी । इसमें सन्देह नहीं । क्योंकि यह बात इन पुस्तकों और परचों से अच्छी तरह साबित है । जिन मनुष्य जातियों का समूल ही नाश हो गया था उनकी और अन्य वर्तमान जातियों की भी, किताबें पढ़ने का इन लोगों को बड़ा शौक़ था । और जातियों की विलुप्त या विद्यमान भाषाओं पर इनकी बड़ी भक्ति थी । इससे निःसन्देह मालूम होता है कि इन लोगों की निज की भाषा में बहुत कम पुस्तकें पढ़ने लायक़ थीं । परन्तु सब से बढ़ कर अचरज इस बात का

ख़्याल करके होता है कि बाल बच्चों के पालन-पोषण और विद्याभ्यास इत्यादि का कहीं नाम को भी इन पुस्तकों में ज़िक्र नहीं। जाँच से तो यही मालूम होता है कि ये लोग इतने मूर्ख न थे कि इस बहुत बड़े महत्व के विषय को न समझ सकते। इससे लाचार होकर यही कहना पड़ता है कि ये पाठ्य-पुस्तकें उस ज़माने के मठवासी महन्तों ने आमरण ब्रह्मचारी रहने की प्रतिज्ञा करने वाले विद्यार्थियों ही के लिए बनाई थीं।"

बच्चों का जीवन या मरण, सुख या सर्वनाश, हित या अहित, सारी बातें, उनको लड़कपन में दी गई शिक्षा ही पर अवलम्बित रहती हैं। तिस पर भी जो लोग थोड़े ही दिनों में बच्चों के माँ बाप बनने वाले हैं, अर्थात् जो विवाह हो जाने पर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने वाले हैं, उनको बाल-बच्चों को पालने और उन्हें शिक्षा देने के विषय में भूल कर भी कभी एक शब्द तक नहीं सिखलाया जाता। क्या यह बहुत बड़े आश्चर्य की बात नहीं? क्या यह बहुत ही अद्भुत और चमत्कारिणी घटना नहीं? क्या यह बहुत ही विलक्षण पागलपन नहीं कि भावी सन्तति का भाग्य, अविचार से भरी हुई पुरानी चाल, प्रवृत्ति, अटकल, मूर्ख दाइयों की सलाह और घर की अन्ध-परम्परा-भक्त बड़ी बूढ़ियों की समझ के भरोसे छोड़ दिया जाय? हिसाब-किताब और बही-खाते का कुछ भी ज्ञान न रखने वाला कोई व्यापारी यदि कारोबार

शुरू कर दे तो हम उसकी मूर्खता का ढोल पीटने लगेंगे और बहुत जल्द उसके बरबाद होने की ख़बर सुनने की आशा करेंगे। अथवा शरीरशास्त्र का अभ्यास किये बिना ही यदि कोई चीर-फाड़ अर्थात् जर्राही का काम आरम्भ कर दे तो हमें उसकी ढिठाई पर अचम्भा होगा और उसके रोगियों पर दया आवेगी। परन्तु जो मानसिक, नैतिक और शारीरिक सिद्धान्त इस विषय के आदर्श हैं उनका ज़रा भी विचार न करके—उन पर कुछ भी ध्यान न देकर—बाल बच्चों के पालन-पोषण और विद्याभ्यास आदि कठिन काम यदि माँ बाप शुरू कर दें तो हमें न तो उनकी करतूत पर आश्चर्य ही होता है और न उनके अन्याय की पात्र उनकी सन्तति पर दया ही आती है।

आरोग्य-रक्षा के नियम माँ बाप को न मालूम रहने से उनके बाल बच्चों को जो भोग भुगतने पड़ते हैं, उनको जो दुर्गति होती है, उन पर जो आफ़त आती हैं, उनका ठौर ठिकाना नहीं। हजारों बच्चे तो माँ बाप की असावधानी और मूर्खता के कारण पैदा होते ही मर जाते हैं। जो बचते हैं उनमें लाखों अशक्त, निर्बल और जन्म रोगी होते हैं, और करोड़ों ऐसे नीरोग और सबल नहीं होते जैसे होने चाहिए। अब इन सबको आप जोड़ डालिए तो आप को मालूम हो जायगा कि माँ बाप की नादानी के कारण सन्तति को कितनी हानि उठानी पड़ती है, कितना दुःख

सहना पड़ता है कितनी आपदाओं का सामना करना पड़ता है। लड़कपन में लड़के जिस तरह रक्खे जाते हैं और जिस तरह की शिक्षा उन्हें दी जाती है उसी के अनुसार जन्म भर उनको सुख दुःख मिलता है। यदि अच्छी शिक्षा मिली, यदि वे अच्छी तरह रक्खे गये, तो उन्हें जन्म भर सुख मिलता है, नहीं तो दुःख। पर जरा इस बात का तो ख़याल कीजिए कि आज कल लड़के किस तरह पाले पोसे जाते हैं। इस समय हम लोग जिस तरह लड़कों को रखते हैं और जिस तरह की शिक्षा उन्हें देते हैं उसमें यदि एक गुण होता है तो बीस दोष होते हैं। इन बातों का असर हर घड़ी लड़कों पर पड़ता है। लड़कपन में लड़कों के पालन-पोषण और शिक्षण में अविचार से काम लेने और महत्व की बातों को दैव या भाग्य के भरोसे छोड़ देने से जो हानि होती है उसका अन्दाजा नहीं किया जा सकता। इस तरह का अविचार—इस तरह की बेपरवाही—आज कल यहाँ सब कहीं प्रचलित है। इन सब बातों पर ख़याल करने से जो हानि लड़कों को पहुँच रही है उसका थोड़ा बहुत अन्दाजा आपको जरूर हो जायगा। कोई इस बात का विचार नहीं करता कि पायदार मज़बूत और खूब गरम कपड़े पहने बिना लड़कों को सरदी में बाहर खेलने-कूदने देना और सरदी के कारण उनके हाथ पैरों का फटना, अच्छा है या नहीं। पर इसका विचार करना बहुत

जरूरी बात है। क्योंकि इन बातों से लड़कों के भावी सुख-दुःख का बहुत बड़ा सम्बन्ध है। इस तरह की बेपरवाही के कारण या तो लड़के बीमार रहा करते हैं, या उनकी बाढ़ रुक जाती है, या काम करने की शक्ति घट जाती है, या तरुण होने पर जितना बल उनके बदन में होना चाहिए उतना नहीं होता। इसका फल यह होता है कि कोई काम अच्छी तरह नहीं हो सकता। उसमें पूरी कामयाबी नहीं होती और लड़कों के भावी सुख में बाधा आती है। इसका कारण क्या है? हमारा अविचार, हमारी नादानी, हमारी बेपरवाही! और कुछ नहीं। लड़कों को जो एक ही तरह का और कम बलवर्द्धक खाना खिलाया जाता है वह क्या उनको सजा देने के इरादे से खिलाया जाता है? इस तरह का खाना खाने से, बड़े होने पर, उनका शारीरिक बल जरूर कुछ कम हो जाता है और पुरुषत्व के काम करने की योग्यता में भी थोड़ी बहुत न्यूनता जरूर आ जाती है। क्या लड़कों के लिए कोलाहलकारी और दौड़-धूप के खेल मना हैं? या बदन पर काफ़ी कपड़े न होने के कारण जाड़े की ऋतु में इस लिए वे बाहर नहीं निकलने पाते कि कहीं उनको सरदी न लग जाय? कुछ भी हो, पर इस तरह घर के भीतर बन्द रहने से उनके आरोग्य में जरूर बाधा आती है और उनकी शारीरिक शक्ति भी जरूर थोड़ी बहुत क्षीण हो जाती है। तरुण होने

पर भी लड़कों और लड़कियों को रोगी और अशक्त देख कर माँ-बाप बहुधा अपना दुर्भाग्य या एक प्रकार का ईश्वरीय कोप समझते हैं। अथवा आज कल लोगों की जैसी बेढंगी समझ है उसके अनुसार वे यह कल्पना कर लेते हैं कि ये बातें अपने हाथ में नहीं—ये आपदायें बिना कारण ही पैदा हो गई हैं; या यदि किसी कारण हुई हैं तो उसका पैदा करने वाला ईश्वर है; उसे दूर करना आदमी के बस की बात नहीं। परन्तु इस बात को कौन समझदार आदमी न क़बूल करेगा कि इस तरह की तर्कना पागलपन है? यह निस्संदेह सच है कि कभी कभी माँ-बाप के दुर्गुणों और रोगों का फल सन्तान को भी भोगना पड़ता है, अर्थात् माँ बाप में जो दोष होते हैं वे कभी कभी सन्तान में भी आ जाते हैं; परन्तु बहुधा पालन-पोषण में माँ बाप की नादानी ही के कारण लड़कों को बीमारियाँ हो जाया करती हैं और फिर जन्म भर उनकी तबीयत अच्छी नहीं रहती। इस सारे दुख-दर्द के, इस सारी निर्बलता के, इस सारी आपदा के, इस सारी उदासीनता के ज़िम्मेदार बहुत कर के माँ बाप ही होते हैं। माँ बाप ने अपने बाल बच्चों की जान को हर घड़ी अपने काबू में रखने का ठेका सा ले रक्खा है—उनको खिलाने, पिलाने और शिक्षा देने का भार उन्होंने हर घड़ी अपने ही ऊपर रक्खा है। पर जिन्दगी से सम्बन्ध रखने वाली जिन बातों के विषय में वे अविचार से भरी हुई आज्ञायें दे कर और

रुकावटें पैदा करके, बराबर उलट फेर किया करते हैं, उन बातों का ज्ञान प्राप्त करने में उन्होंने बहुत बड़ी निर्दयता की बेपरवाही की है। उन्हें सीखने की जरा भी कोशिश उन्होंने नहीं की। आरोग्य-रक्षा और शरीरशास्त्र के बहुत ही सीधे सादे नियमों का भी ज्ञान प्राप्त न करने के कारण वे अपने बच्चों के आरोग्य को—उनके शारीरिक बल को—बराबर क्षीण करते चले जा रहे हैं—हर साल उसे अधिकाधिक कम करते चले जा रहे हैं। इस तरह की निर्दयता और नादानी के कारण वे अपनी सन्तति ही को नहीं, किन्तु सन्तति की भावी सन्तति को भी बीमारी के घर और अकाल मृत्यु के मुँह में फेक रहे हैं।

[२]

जब हम आरोग्य शिक्षा से आगे बढ़कर नैतिक शिक्षा की तरफ आते हैं तब वहाँ भी हम इसी तरह की नादानी और अज्ञानता देखते हैं। वहाँ भी हमें माँ बाप की बेपरवाही और मूर्खता के उदाहरण मिलते हैं। लड़कपन में बच्चों के पालन-पोषण का भार सिर्फ माँ पर रहता है। इससे उनको सबसे पहली शिक्षा माँ ही से मिलनी चाहिए। अब जरा कम-उम्र की माँ, और उसके बच्चों को खिलाने पिलाने वाली दाई की योग्यता का विचार कीजिए। माँ के जारी किये हुए कानूनों पर तो जरा ध्यान दीजिए। अभी

थोड़े ही साल हुए कि वह मदरसे में पढ़ती थी। वहाँ उसके दिमाग में हजारों शब्द, नाम और तारीखें कूट कूट कर भरी गई थीं। दिन रात उसने उन्हें रट रट कर याद किया था। उसे किसी बात को सोचने या समझने का शायद कभी मौका ही नहीं दिया गया। अर्थात् उसकी विचार-शक्ति को जरा भी प्रौढ़ता नहीं प्राप्त हुई। लड़कों के कोमल मन को किस तरह की शिक्षा देनी चाहिए, इस विषय का एक शब्द भी वहाँ उसको नहीं सिखाया गया। इस दशा में खुद कोई नई शिक्षा-प्रणाली सोच कर निकालने की तो बात ही नहीं, उसे इस तरह की शिक्षा का गन्ध भी मदरसे में नहीं मिला। फिर वह बेचारी बाल-शिक्षा की नई तरकीब निकाले कैसे? यह तो मदरसे की शिक्षा का हाल हुआ। मदरसा छोड़ने और विवाह होने के बीच के वक्त में भी सन्तति के पालन-पोषण की शिक्षा उसे नहीं मिली। वह गाने बजाने, बेल-बूटे काढ़ने, किस्से कहानियों की किताबें पढ़ने और आज इसके यहाँ कल उसके यहाँ जलसों और दावतों में शरीक होने में गया। इस समय तक उसने इस बात का कुछ भी विचार नहीं किया कि लड़के वाले होने पर कितनी बड़ी जिम्मेदारी मुझ पर आ पड़ेगी। इस तरह की जिम्मेदारी उठाने में, जो मानसिक शिक्षा स्त्री को थोड़ी बहुत मदद पहुँचाती है उस शिक्षा का शायद ही कुछ अंश उसे मिला हो।

अब देखिए, उसी पर एक ऐसे प्राणी के पालने पोसने और शिक्षित करने का भार आ पड़ा जिसकी शारीरिक और मानसिक शक्तियाँ प्रतिदिन बढ़ती रहती हैं। जरा इस नादानी पर तो ध्यान दीजिए कि जिस काम का उसे कुछ भी ज्ञान नहीं, जिसे वह बिलकुल ही नहीं जानती, उसीको अब उसे करना है। और, काम भी ऐसा जो उस विषय का पूरा पूरा ज्ञान होने पर भी, अच्छी तरह नहीं हो सकता। पर यही महा कठिन काम करने का बीड़ा, माँ के नये पद को पाने वाली इस युवती को उठाना पड़ा। ऐसी माँ को इतना कठिन काम करने में कहाँ तक कामयाबी हो सकती है, इसका फैसला पाठक ही करें। वह इस बात को बिलकुल नहीं जानती कि मनोवृत्तियाँ किस तरह की होती हैं? उनकी कैफियत क्या है? वे किस तरह बढ़ती हैं और किस तरह एक दूसरी के बाद पैदा होती हैं? उनका काम क्या है? उनका उपयोग कहाँ आरम्भ होता है और कहाँ समाप्त? वह यह समझती है कि कोई कोई मनोवृत्तियाँ सर्वथा बुरी हैं और कोई कोई सर्वथा भली। पर यह समझ उन वृत्तियों में एक के विषय में भी ठीक नहीं। यह ख़याल बिलकुल ही गलत है कि कोई कोई वृत्ति सर्वथा बुरी और कोई कोई सर्वथा अच्छी होती है। फिर एक और बात भी ध्यान देने लायक है। जिस शरीर को पालने पोसने की जिम्मेदारी उस पर है उस

शरीर की बनावट से वह जैसे अनभिज्ञ होती है वैसे ही जुदा जुदा दवाओं और चिकित्साओं का जो असर उस शरीर पर पड़ता है उससे भी वह अनभिज्ञ होती है—उसका भी ज्ञान उसे नहीं होता। इन बातों को न जानने से बच्चों को हर घड़ी जो कष्ट भोगने पड़ते हैं—उन पर हर घड़ी जो आफ़तें आती हैं—वे बहुत ही भयङ्कर हैं। इस अज्ञान के कारण जो परिणाम होते हैं उनको हम प्रति दिन अपनी आँखों से देखते हैं। वे छिपे नहीं। उनसे अधिक हानिकारक परिणाम और क्या हो सकते हैं ? माँ को न तो यही ज्ञान होता है कि कौन सी मानसिक वृत्तियाँ भली हैं और कौन सी बुरी। और न उन वृत्तियों के कारण और परिणाम ही का ज्ञान होता है। अतएव मनोवृत्तियों को रोकने या उनके काम में विघ्न डालने से जो हानि बहुधा होती है वह हानि उससे कहीं बढ़ कर है जो भले बुरे की परवा न करके उन्हें यथेच्छ अपना काम करने देने से हो सकती है। अर्थात् यह प्रवृत्ति भली है या बुरी, इसका विचार न कर के बच्चे को अपनी इच्छा के अनुसार रहने देने से उतनी हानि नहीं होती जितनी कि बहुधा बेसमझे बूझे उसकी किसी प्रवृत्ति को—उसके मन के किसी झुकाव को—बुरा समझ कर रोकने से होती है। बच्चे को जो काम करने की आदत होती है और जिनसे उसे लाभ के सिवा हानि भी नहीं हो सकती, उनको करने से वह उसे रोकती है। वह समझती है कि

ऐसे कामों से बच्चे को हानि पहुँचेगी। वह नहीं जानती कि उसका रोकना हानिकर है। इस तरह की रुकावट से बच्चा ना-खुश रहता है; वह चिड़चिड़ा हो जाता है; और लाभ के बदले उसे ज़रूर हानि पहुँचती है। बच्चे के साथ इस तरह पेश आने से माँ बेटे में वैमनस्य हो जाता है और परस्पर जैसा स्नेह रहना चाहिए नहीं रहता। जिन कामों को माँ अच्छा समझती है उन्हें वह धमकी या लालच देकर बच्चे से कराती है। अथवा वह बच्चे को यह सुझाती है कि ये काम करने से सब लोग तुम पर खुश होंगे और तुम्हारी तारीफ़ करेंगे। इस तरह वह उससे वे काम कराती है। बच्चे के मन की वह बिलकुल परवा नहीं करती। ऊपरी मन से यदि बच्चे ने उसका कहना मान लिया तो इतने ही से वह कृतार्थ हो जाती है। वह समझती है कि बस मेरा कर्तव्य हो चुका। इस तरह के बर्ताव से बच्चे को कोई अच्छी शिक्षा तो मिलती नहीं—वह कोई अच्छी बातें तो सीखता नहीं—हाँ दम्भ, डर और खुदगरज़ी का शिक्षा उसे मिल जाती है। एक तरफ़ तो वह बच्चे को सच बोलने की शिक्षा देती है, दूसरी तरफ़ वह खुद अपने ही बर्ताव से झूठ के नमूने उसके सामने रखती है। वह बच्चे से कहती है कि यदि तुम सच न बोलोगे तो मैं तुमको यह सजा दूँगी, वह सजा दूँगी। पर जब बच्चा झूठ बोलता है तब अपने कहने के मुताबिक़ वह सज़ा नहीं देती। यह

झूठ का नमूना नहीं है तो क्या है? यही नमूना लड़कों को झूठ बोलना सिखला देता है। एक तरफ़ तो वह यह सिखाती है कि आदमी को आत्म-संयमन करना चाहिए—अपने आप को क़ाबू में रखना चाहिए—दूसरी तरफ़ ज़रा ज़रा सी बात के लिए वह अपने छोटे छोटे बच्चों पर बिगड़ उठती है और क्रोध करती है। क्या इसी का नाम आत्म-संयमन है? जिस तरह बड़े होने पर संसार के सारे व्यवसायों में भले-बुरे कामों का भला-बुरा परिणाम होने देना शिक्षा का सब से अच्छा तरीका है—स्वाभाविक रीति पर ऐसे परिणामों से फिर चाहे जितना सुख या दुःख हो—उसी तरह लड़कपन में बच्चों को सुमार्गगामी बनाने के लिए उनको जो शिक्षा दी जाय उसमें भी उसी तरीक़े से काम लेना चाहिए और बच्चों के भले-बुरे कामों का भला या बुरा परिणाम होने देना चाहिए। परन्तु बेचारी माँ को इस तरह की शिक्षा के तरीके का स्वप्न में भी ख्याल नहीं होता। कार्य्य कारण भाव का निश्चय न होने से, अर्थात् बच्चे के पालन-पोषण से सम्बन्ध रखने वाली शिक्षा यथा शास्त्र न प्राप्त करने से, और बच्चों के मन के जुदा जुदा भावों का ज्ञान न होने के कारण उन भावों के अनुसार बच्चों के साथ बर्ताव करने का सामर्थ्य उसमें न होने से, वह मनमाने तरीके से उन्हें रखती है। आज वह अपने बच्चे से एक तरह का बर्ताव करती है, कल और

तरह का। जो उसके मन में आता है वही उसका कानून है। उसीके अनुसार वह बच्चों का शासन करती है—उसीके अनुसार वह उन पर हुकूमत करती है। इससे बहुत बड़ी हानि होती है। परन्तु बच्चों की समझ जैसे जैसे बढ़ती जाती है वैसे वैसे उनके मन की वृत्ति मनुष्य-जाति के स्वभाव-सिद्ध नैतिक भावों की तरफ अधिक अधिक झुकती जाती है। इससे छोटी मोटी विपरीत बातों का असर बच्चों पर कम पड़ता है और जितना बिगड़ते हुए वे मालूम होते हैं उतना नहीं बिगड़ते। यदि बच्चों में यह वृत्ति स्वभाव-सिद्ध न होती तो माँ के ऐसे अशास्त्रीय और अनुचित शिक्षण के कारण वे बरबाद होने से न बचते। माँ का ऐसा अन्याय-पूर्ण कानून उनको संसार में किसी काम का न रखता।

[३]

अच्छा अब बच्चों की बुद्धि विषयक शिक्षा का विचार कीजिए। क्या इस शिक्षा के सम्बन्ध में भी गड़बड़ नहीं है? क्या इसका भी प्रबन्ध वैसा ही ख़राब नहीं है? मान लीजिए कि बुद्धि-विषयक सब बातें यथा नियम होती हैं। मान लीजिए कि बच्चों की बुद्धि का विकास भी नियमानुसार ही होता है। अतएव मानना पड़ेगा कि बिना इन नियमों का ज्ञान हुए बच्चों की शिक्षा अच्छी तरह नहीं हो सकती। जिस तरीक़े

से बच्चों को ख़याल करना और ख़यालात को इकट्ठा करके उन्हें याद रखना सिखलाया जाता है उस तरीक़े का पूरा पूरा ज्ञान हुए बिना ये काम अच्छी तरह नहीं हो सकते। बिना इस ज्ञान के शिक्षा को सम्भव समझना निरा पागलपन है। पर, आजकल, दो ही चार शिक्षक ऐसे होंगे जो मनोविज्ञान का कुछ भी ज्ञान रखते होंगे। और माँ बाप की तो बात ही न पूछिए। उनमें तो शायद ही किसी की पहचान इस शास्त्र से होगी। जिस शास्त्र में मन के गुण-धर्म्म और उसकी शक्तियों का विचार किया गया है उसी की जब यह दशा है तब कैसे सम्भव है कि मानसिक नियमों का ख़याल रख कर बच्चों को शिक्षा दी जा सके। अतएव जैसी शिक्षा बच्चों को मिलनी चाहिए, और जैसी मिल रही है, उसमें आकाश पाताल का अन्तर है। शिक्षा की जो प्रणाली इस समय प्रचलित है वह बहुत ही दूषित और बहुत ही शोचनीय है; और होनी ही चाहिए; क्यों कि सब सामान ही वैसा है। यही नहीं कि जो शिक्षा दी जाती है वही दूषित है; नहीं, जिस तरीक़े से वह दी जाती है वह तरीक़ा भी दूषित है। जिन बातों की शिक्षा दी जानी चाहिए उनकी तो दी नहीं जाती; दी जाती है व्यर्थ, अनुपयोगी और अनुचित बातों की। फिर जो ऊटपटाँग की बातें लड़कों के दिमाग में ज़बरदस्ती भरी जाती हैं वे ठीक क्रम से भी नहीं भरी जातीं। न शिक्षा ही ठीक है; न क्रम ही

ठीक है; न तरीका ही ठीक है । कुछ भी ठीक नहीं । न उचित शिक्षा ही का प्रबन्ध है; न उचित क्रम ही का प्रबन्ध है; और न उचित तरीके ही का प्रबन्ध है । माँ-बाप समझते हैं कि किताबों से जो ज्ञान प्राप्त होता है—जो शिक्षा मिलती है—बस वही विद्या है । विद्या की सीमा वे इतनी ही परिमित समझते हैं । इसी ख़याल से वे अपने छोटे छोटे बच्चों के हाथ में समय से बरसों पहले ही किताबें थमा देते हैं । इससे उनकी बड़ी हानि होती है । शिक्षक लोग यह नहीं समझते कि किताबें शिक्षा प्राप्त करने का गौण साधन हैं । वे प्रधान साधन नहीं । उनसे जो शिक्षा मिलती है वह प्रत्यक्ष शिक्षा नहीं, अप्रत्यक्ष है । जब प्रत्यक्ष साधनों की सहायता से शिक्षा न मिल सकती हो तभी अप्रत्यक्ष साधनीभूत किताबों की सहायता लेनी चाहिए । सीधे सादे तरीके से प्रत्येक शिक्षा मिलना असम्भव होने पर ही किताबों से शिक्षा प्राप्त करना मुनासिब कहा जा सकता है । जिन चीज़ों को आदमी खुद न देख सके उन्हीं को उसे दूसरों की आँखों से देखना चाहिए । इसी तरह जिस शिक्षा को लड़के प्रत्यक्ष रीति से खुद ही न प्राप्त कर सकते हों उसी के लिए उन्हें किताबों की मदद पहुँचाना मुनासिब है । किताबों से कुछ सीखना मानों दूसरों की आँखों से देखना है । पर इस बात को शिक्षक बिलकुल ही भूल जाते हैं, इस पर वे ध्यान ही नहीं

देते। इसी से प्रत्यक्ष रीति से जानी जाने लायक़ बातों को भी वे अप्रत्यक्ष रीति से लड़कों को सिखलाते हैं। थोड़ी उम्र में जो ज्ञान लड़कों को आप ही आप होता रहता है वह बड़े महत्त्व का है—वह अनमोल है। लड़कपन में लड़कों की बुद्धि बहुत शोधक होती है। बुद्धि की यह शोधकता—ज्ञान प्राप्त करने की यह लालसा—उनमें स्वाभाविक होती है। वह आप ही आप पैदा होती है। पर शिक्षक महाशय इस स्वभावसिद्ध ज्ञान-लिप्सा पर धूल डालते हैं। लड़कपन में बच्चे बड़े कौतूहल और ध्यान से हर एक बात को देखते हैं और उसके विषय में पूछ पाछ करते हैं। उनके कौतूहल का निवारण न करके उसे रोक देना या सुनी अनसुनी कर जाना बहुत बुरा है। उनकी ज्ञान-लिप्सा का प्रतिबन्ध करना बहुत हानिकारी है। प्रतिबन्ध न करके उसे और उत्तेजना देना चाहिए। लड़के जिस बात को पूछें उसे बताना चाहिए। वे जिस चीज़ के विषय में कोई बात जानना चाहें उसका यथा सम्भव पूरा पूरा और सच्चा हाल उनसे कहना चाहिए। परन्तु शिक्षक ऐसा नहीं करते। वे करते क्या हैं कि जो बातें लड़कों की समझ के बाहर हैं और जिनको सीखना उनको नागवार मालूम होता है उन्हीं को लड़कों की आँखों के सामने लाने और उनके दिमाग़ में भरने का वे यत्न करते हैं। वे वैसी बातें लड़कों को सिखलाने की कोशिश करते हैं जिन्हें सीखने में

न तो लड़कों का मन ही लगता है और न वे उन्हें समझ ही सकते हैं। शिक्षकों का मन अन्ध-भक्ति या अन्ध-परम्परा में डूबा रहता है। उसकी प्रेरणा से वे प्रत्यक्ष विद्या का आदर नहीं करते, करते हैं विद्या की तसवीर का, विद्या के प्रतिबिम्ब का। उनके हृदय में नक़ली ही शिक्षा की भक्ति का वेग अधिक होता है। इससे उनको यह नहीं सूझता कि जब घर, द्वार, खेत, खलिहान, गली, कूचे आदि में देख पड़ने वाली चीज़ों का ज्ञान अच्छी तरह हो जाय तभी उनके आगे की चीज़ों का ज्ञान प्राप्त करने का साधन, किताबें, लड़कों के हाथ में देना चाहिए। वे नहीं जानते कि नये नये तरीक़ों से घर और पास-पड़ोस से दूर की चीज़ों का ज्ञान प्राप्त करने का वही उपयुक्त समय है। उसके पहले लड़कों के हाथ में किताबें देने की कोई जरूरत नहीं। इस तरीके से शिक्षा देना सिर्फ़ इसी कारण से मुनासिब नहीं कि अप्रत्यक्ष रीति से प्राप्त हुए ज्ञान की अपेक्षा प्रत्यक्ष रीति से प्राप्त हुआ ज्ञान अधिक मूल्यवान है, किन्तु इस कारण से भी कि जिन चीज़ों की शिक्षा लड़कों को दी जाने को है उनका तजरिबा पहले ही से उनको जितना अधिक होगा उतना ही अधिक किताबें पढ़ते समय उन चीज़ों का बयान उनकी समझ में आवेगा; उतना ही अधिक अच्छी तरह वे उन चीज़ों का ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे। एक दोष यह भी है कि यह रूढ़िप्राप्त या

परम्परागत शिक्षा—यह रस्मी तालीम—बहुत जल्द शुरू कर दी जाती है और जिन नियमों के अनुसार मन की शक्तियाँ बढ़ती जाती हैं उनकी कुछ भी परवा न करके यह जारी रक्खी जाती है। मानसिक शक्तियों में तो उन्नति होती जाती है; पर इस शिक्षा-प्रणाली में उन्नति नहीं होती। वह जैसी की तैसी जारी रहती है। मूर्त-विषयों का ज्ञान पहले होना चाहिए, अमूर्त-विषयों का पीछे। जो चीज़ें आँखों के सामने रहती हैं उनसे सम्बन्ध रखने वाली शिक्षा हो चुकने पर, उन चीज़ों की शिक्षा होनी चाहिए जो आँखों के सामने नहीं रहतीं। दृश्य विषयों की शिक्षा के बाद अदृश्य विषयों की शिक्षा देना मुनासिब है। ज्ञान प्राप्ति में इसी क्रम से काम लेना चाहिए और सीधी सादी बातों की शिक्षा से शुरू करके कठिन बातों की शिक्षा तक पहुँचना चाहिए। परन्तु इस नियम की ज़रा भी परवा नहीं की जाती और अमूर्त और अत्यन्त कठिन विषयों की शिक्षा, उदाहरण के लिए व्याकरण की, जो बहुत पीछे शुरू होनी चाहिए, बिलकुल बचपन ही में शुरू कर दी जाती है। इसी तरह, लड़कों को बचपन ही में, भूगोल-विद्या जिस क्रम से सिखलाई जाती है वह क्रम भी ठीक नहीं। राजकीय व्यवस्था के अनुसार जुदा-जुदा देशों और खण्डों के जो विभाग होते हैं उन के नाम और उन से सम्बन्ध रखने वाली शुष्क बातें बचपन

ही में पढ़ाई जाती हैं। इस तरह की मुर्दा बातें सीखने में लड़कों का मन नहीं लगता और उनका बहुत सा समय नष्ट जाता है। इन बातों को, कुछ दिन बाद, लड़कों के जरा बड़े होने पर, सिखलाना चाहिए। इनका सम्बन्ध समाज से है। अतएव सामाजिक शिक्षा के साथ इनकी शिक्षा होनी उचित है। इस तरह की भूगोल-विद्या तो इतना जल्द शुरू कर दी जाती है; पर प्राकृतिक भूगोल अर्थात् वह विद्या जिस में पृथ्वी के आकार और रूप आदि का वर्णन रहता है और जिस के सीखने में लड़कों का मन लगता है और जो उनकी समझ में भी आ सकती है, प्रायः नहीं सिखलाई जाती। उसे सिखलाने की बहुत कम कोशिश होती है। प्रत्येक विषय सिखलाने का क्रम ठीक नहीं। जितने विषय हैं उनकी शिक्षा में नियमों की प्रायः बिलकुल ही परवा नहीं की जाती। कौन विषय किस कायदे से सिखलाना चाहिए, इस बात पर बहुधा कोई ध्यान नहीं देता। परिभाषा, व्याख्या, नियम और सिद्धान्त पहले ही सिखला दिये जाते हैं। पर जिन चीज़ों के विषय में ये बातें सिखलाई जाती हैं; उनसे लड़कों की, तबतक, प्रत्यक्ष पहचान ही नहीं होती, वे उन्हें देख ही नहीं पाते। चाहिए यह कि ये बातें, सृष्टिक्रम के अनुसार, उदाहरणों के द्वारा, सिखलाई जायँ। संसार में प्रत्येक चीज़ को देखने के बाद जिस क्रम से उसके प्रत्येक

अङ्ग का ज्ञान होता है उसी क्रम से शिक्षा भी होनी चाहिए। जिस चीज़ के विषय की शिक्षा दी जाय उस चीज़ के सृष्टि सम्बन्धी क्रम और नियम का जरूर ख़याल रखना चाहिए और उन्हीं के अनुसार लड़कों को सब बातें बतलाना चाहिए। जिन लड़कों ने कभी महासागर या पहाड़ या डमरूमध्य नहीं देखा उनके पढ़ने की किताबों के शुरू ही में उनकी परिभाषा आदि का देना क्रम और नियम के बिलकुल ही खिलाफ़ है। फिर, इन सब दोषों से बढ़ कर दोष, तोते की तरह, हर बात को रट कर याद कर लेने की आदत है। यह आदत बहुत ही बुरी है। इस आदत ने लड़कों की बुद्धि का सत्यानाश कर डाला है। देखिए इसका नतीजा क्या होता है। बच्चों की बुद्धि सञ्चालना में रोक टोक करने—उसे यथेच्छ न विचरण करने देने—और उनसे जबर्दस्ती पुस्तकें रटवाने से उनकी ज्ञानेन्द्रियाँ बचपन ही में कुण्ठित होकर आगे बिलकुल ही मन्द हो जाती हैं। उनकी बुद्धि की तीव्रता जाती रहती है। जिन विषयों के समझने की योग्यता नहीं है उन्हें सिखलाने, और बिना किसी विषय को अच्छी तरह समझाये उसके सम्बन्ध के साधारण नियम या सिद्धान्त बतलाने से बच्चों की बुद्धि बेतरह गड़बड़ में पड़ जाती है। इस तरह के नियम या सिद्धान्त ठीक ठीक उनकी समझ ही में नहीं आते। जो जिस बात को जानता ही नहीं वह उसके

सिद्धान्त कैसे अच्छी तरह समझ सकेगा ? शिक्षा का जो तरीक़ा आज कल जारी है, वह लड़कों को ज़रा भी इस लायक़ नहीं होने देता कि वे ख़ुद भी कुछ सोच विचार कर सकें और अपनी निज की खोज से अपने आप के शिक्षक हो सकें। यह तरीक़ा—दूसरों के ख़यालात को लड़कों के मग्ज़ में भरना—सिखला कर उन्हें बिलकुल ही आलसी, निकम्मा और परमुखापेक्षी बना देता है। बहुत बचपन में विद्याभ्यास के वज़नी बोझ का दिमाग़ पर दबाव पड़ने से लड़कों की मानसिक शक्तियाँ चूर हो जाती हैं। इन सब कारणों से बहुत ही कम लड़के पूरे विद्वान् और योग्य निकलते हैं। परीक्षायें ख़तम होते ही किताबें उठा-कर ताक़ पर रख दी जाती हैं; फिर, लड़के भूल कर भी कभी उनकी तरफ़ नहीं देखते। सीखी हुई बातों में—सम्पादन किये हुए ज्ञान में—व्यवस्था न होने, अर्थात् यथा नियम और यथाक्रम शिक्षा न मिलने के कारण, शिक्षित विषयों का बहुत सा हिस्सा जल्द भूल जाता है। जो कुछ रह जाता है वह भी न रहने के बराबर है। उसमें भी कुछ तत्त्व नहीं रहता। क्योंकि लड़कों को यही नहीं मालूम रहता कि मदरसे में सीखी हुई विद्या से व्यवहार में काम किस तरह लेना चाहिए। यह उन्हें सिखलाया ही नहीं जाता कि काम-काज में विद्या का कैसे उपयोग करना चाहिए। विद्या को किस तरह तरक्की देना चाहिए। किसी चीज़ का

सही सही ज्ञान प्राप्त करने, किसी विषय की बारीक खोज करने, और अपने आप—स्वाधीनता-पूर्वक—किसी बात का विचार करने की बहुत ही थोड़ी शक्ति लड़कों में होती है। इन सब बातों के सिवा प्राप्त किये गये ज्ञान का बहुत सा हिस्सा व्यवहार में बहुत ही कम काम देता है। उसकी क़ीमत बहुत ही कम होती है। सारांश यह कि लड़कों की शिक्षा में अत्यन्त उपयोगी और अत्यन्त महत्त्व से भरे हुए ज्ञान का एक बहुत बड़ा समूह फटकने तक नहीं पाता। वह बिलकुल ही निकाल बाहर किया जाता है।

यह हाल लड़कों की शिक्षा का है। और ऐसा होना ही चाहिए। माँ-बाप की जैसी स्थिति है उस से इसी बात का अनुमान भी किया जा सकता है। माँ-बाप की दशा देख कर अनुमान से भी यह बात जानी जा सकती है कि जो हाल लड़कों की शिक्षा का इस समय है वही हो सकता है। जैसा कारण, वैसा ही कार्य्य। लड़कों की शारीरिक, नैतिक और बुद्धि-विषयक शिक्षा इतनी दोष-पूर्ण है कि उसका ख़याल कर के डर मालूम होता है। शिक्षा-प्रणाली के इतना दोषपूर्ण होने का बहुत कुछ कारण खुद माँ-बाप हैं। क्योंकि जिस ज्ञान की बदौलत, जिस विद्या की बदौलत, जिस शिक्षण की बदौलत लड़कों की शिक्षा ठीक तौर पर हो सकती है, उससे वे बिलकुल ही कोरे हैं। उसका लेश भी उन में नहीं। किसी बहुत ही

पेचीदा सवाल को हल करने के लिए जिन नियमों या सिद्धान्तों के जानने की ज़रूरत है उन पर जिस आदमी ने शायद ही कभी ध्यान दिया है वह यदि सवाल को हल करने चले तो उससे क्या उम्मेद की जा सकती है ? क्या यह सम्भव है कि वह उस सवाल को हल कर सके ? चमड़े की चीज़ें तैयार करने, घर बनाने, या रेलगाड़ी और जहाज़ चलाने की विद्या सीखने के लिए बहुत दिन तक उम्मेदवारी करनी पड़ती है । बहुत दिन तक काम सीखना पड़ता है । तो क्या मनुष्य की शारीरिक और मानसिक शक्तियों को तरक्की देने—उनको विकसित करने—का काम इतना सीधा है कि बिना किसी तरह की तैयारी के हर आदमी उसका प्रबन्ध और देखभाल कर सकता है ? यदि नहीं कर सकता और यदि यह काम सांसारिक कामों में एक को छोड़ कर और सब से अधिक पेचीदा है, और उसकी ठीक ठीक व्यवस्था करना बहुत ही कठिन है—तो उसे अच्छी तरह करने के लिए पहले से कुछ भी तैयारी न करना क्या पागलपन नहीं ? दिखाव के जो काम हैं, बनठन कर दूसरों पर अपना असर डालने के जो काम हैं, उनके बलिदान से—उन पर ध्यान न देने से—विशेष हानि नहीं ? पर शिक्षा-सम्बन्धी इस अत्यन्त ज़रूरी और अत्यन्त महत्त्व के काम में बेपरवाही करने से बहुत बड़ी हानि है । अतएव इस काम में उदासीनता

दिखलाना मुनासिब नहीं। जब बाप झूठे सिद्धान्तों को, अविचार और दुराग्रहवश, बिना जाँच पड़ताल के, सच समझ कर, उनके अनुसार काम करने के कारण, लड़कों में पितृस्नेह का नाश कर चुकता है, उन में बेगानियत पैदा कर चुकता है, अपने कड़े बर्ताव से उनको अपनी इच्छा के विरुद्ध काम करने को विवश कर चुकता है, उन्हें बर्बाद कर चुकता है, और मामला इस नौबत को पहुँचने पर वह खुद भी विपद् में पड़ चुकता है तब उसकी आँखें खुलती हैं, तब उसे ख़याल होता है कि ग्रीस के प्राचीन कवि और करुण-रस प्रधान नाटकों के कर्ता आयस्किलस का हाल लड़कों को मालूम होता चाहे न होता, पर स्वभाव-शास्त्र का अभ्यास उनके लिए बहुत जरूरी था। तब वह समझता है कि यदि इस शास्त्र को वे पढ़ते तो बहुत अच्छा होता। एक विशेष प्रकार के बुखार से अपने बड़े लड़के के मरने पर जब माँ रोने बैठती है, जब कोई स्पष्ट वक्ता डाक्टर यह कह कर उसके सन्देह को पुष्ट करता है कि बहुत अधिक विद्याभ्यास करने से यदि तुम्हारे लड़के का शरीर क्षीण न हो जाता तो वह बच जाता; जब ऐसे दुःख के समय में, दुःख और अनुताप की पीड़ा से वह बेहद व्याकुल होती है तब उसे इटली के प्रसिद्ध कवि दान्ते की मूल कविता, कवि ही की भाषा में, पढ़ कर कितना

सन्तोष हो सकता है ? कितना समाधान हो सकता है ?

इससे यह बात अच्छी तरह ध्यान में आ सकती है कि सांसारिक कारोबार से सम्बन्ध रखने वाले इस तीसरे भाग, अर्थात् बाल बच्चों के पालन-पोषण और उनकी शिक्षा की उचित व्यवस्था करने के लिए जीवन शास्त्र के ज्ञान की बहुत बड़ी जरूरत है, आदमी की जिन्दगी से सम्बन्ध रखने वाले नियमों का जानना बहुत आवश्यक है। बच्चों के यथोचित पालन-पोषण और शिक्षण के लिए शरीर शास्त्र की मोटी मोटी बातों और मानस शास्त्र के मूल तत्वों का थोड़ा बहुत ज्ञान होना ही चाहिए। बिना उसके काम नहीं चल सकता। इस में सन्देह नहीं कि बहुत आदमी इस बात को सुन कर हँस पड़ेंगे। माँ-बाप से इन गहन शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त करने की आशा रखना उनकी दृष्टि में बेहूदापन मालूम होगा। यदि हम यह कहते कि जितने माँ-बाप हैं सब को इन शास्त्रों का पूरा पूरा ज्ञान होना चाहिए तो यह बात ज़रूर हँसने ही लायक थी, तो हमारा यह कहना जरूर उपहास्य था, तो हमारी यह तजवीज़ जरूर बेहूदी थी। पर बात ऐसी नहीं। हम यह नहीं कहते। यदि माँ-बाप को इन शास्त्रों की सिर्फ मुख्य मुख्य बातें और उनको अच्छी तरह समझा सकने के लिए थोड़े से उदाहरण मालूम हो जायँ तो हम इतना ही ज्ञान काफ़ी समझते हैं। इतने ही से बाल बच्चों

के पालने-पोसने और उनको शिक्षा देने का काम निकल सकता है। इससे अधिक हम और कुछ नहीं कहते। इन शास्त्रों की इतनी शिक्षा बहुत थोड़े दिनों में दी जा सकती है। इस तरह की शिक्षा का कार्य-कारण-भाव यदि तर्कना द्वारा बुद्धिस्थ न कर दिया जा सके, यदि दलीलों से उस की योग्यता न समझाई जा सके तो न सही, विधि-निषेध भाव से ही यह शिक्षा दी जाय। इस बात को करना अच्छा है, इस बात को करना बुरा; इतना ही समझा देना काफ़ी होगा। कुछ भी हो, जो बातें हम नीचे लिखते हैं; उनके विषय में मतभेद नहीं हो सकता। उनके खिलाफ़ कोई कुछ नहीं कह सकता। वे बातें ये हैं—

(१) बच्चों के शरीर और मन की तरक्की कुछ विशेष प्रकार के नियमों के अनुसार होती है।

(२) यदि माँ-बाप इन नियमों की जरा भी परवा न करेंगे; यदि इन का बिलकुल ही पालन न करेंगे, तो बच्चे कभी जीते न रहेंगे।

(३) यदि माँ-बाप इन नियमों की थोड़ी ही परवा करेंगे, यदि इनके पालन में थोड़ा ही ध्यान देंगे, तो बच्चों के शरीर और मन में बहुत से पैदा हुए दोष भी न रहेंगे।

(४) यदि माँ-बाप इन नियमों की पूरी पूरी परवा करेंगे, यदि इनको पूर्ण रीति से पालेंगे तभी बच्चों के

शरीर और मन निर्दोष होंगे।

तो अब आप ही इस बात का फैसला कीजिए कि जिन लोगों के किसी न किसी दिन बाल बच्चे होने की सम्भावना है क्या उनको उचित नहीं कि वे ज़रा उत्साह-पूर्वक इन नियमों को सीखने की कोशिश करें?

२—सार्वजनिक कर्त्तव्य।

यहाँ तक माँ-बाप के कर्तव्यों का विचार हुआ। अब हम सार्वजनिक कामों का विचार आरम्भ करते हैं। यहाँ पर हमें इस बात का विचार करना चाहिए कि किस तरह का ज्ञान, किस तरह की शिक्षा, आदमी को सार्वजनिक कर्तव्य करने के योग्य बनाती है। यह नहीं कहा जा सकता कि जिस ज्ञान या जिस शिक्षा की बदौलत आदमी सार्वजनिक काम करने के योग्य हो सकता है उसकी तरफ आज कल किसी का बिलकुल ही ध्यान नहीं; थोड़ा बहुत ध्यान ज़रूर है। क्योंकि इस समय मदरसों में जो विषय पढ़ाये जाते हैं उन में राजकीय और सार्वजनिक कामों से सम्बन्ध रखने वाली बातें, यदि बहुत नहीं तो नाम के लिए, कुछ अवश्य रहती हैं। इन में सिर्फ एक इतिहास ही ऐसा विषय है जिस का दर्जा इस सम्बन्ध में कुछ बड़ा है।

परन्तु, इशारे के तौर पर जैसा हम पहले ही कह चुके हैं, जिस तरह की इतिहास-शिक्षा आजकल मिलती है, वह बहुत कर के किसी काम की नहीं। वह पथ-दर्शक नहीं। उस से उचित शिक्षा नहीं मिलती। इतिहास की जो किताबें जारी हैं, उनकी बात तो कुछ पूछिए ही नहीं। राजकीय विषयों से सम्बन्ध रखने वाली बातों के सही सही सिद्धान्त शायद ही एक आध कहीं उन में पाये जाते हैं। उनकी बात जाने दीजिए; बड़ी उम्र के समझदार आदमियों के लिए जो इतिहास की किताबें खूब परिश्रम पूर्वक लिखी गई हैं उन तक में इन सिद्धान्तों का बहुत कम पता मिलता है। लड़के मदरसे में बहुत करके पढ़ते क्या हैं, राजों और बादशाहों के जीवन-चरित। भला उन से समाज शास्त्र का ज्ञान कैसे हो सकता है? उनमें सामाजिक बातें बहुत ही कम रहती हैं। कहीं कोई कपट-काण्ड रच रहा है, कहीं कोई कूट-नीति का जाल बिछा रहा है; कहीं कोई किसी का राज्य छीन रहा है, कहीं कुछ हो रहा है, कहीं कुछ। यही सब बातें उनमें रहती हैं। इन्हीं बातों को लड़के सीखते हैं और जिन जिन का सम्बन्ध इन से होता है उन का नाम याद करते हैं। इन बातों से देश के उत्कर्ष के कारण समझ में नहीं आ सकते। ये बातें जातीय उन्नति के कारण जानने में बहुत ही कम मदद देती

हैं। इतिहासों में इस तरह की बातें रहती हैं—राज्य के लालच से अमुक अमुक झगड़े फसाद पैदा हुए। उन का फल यह हुआ कि दोनों दल वालों की सेनाएँ खूब बहादुरी से लड़ीं। इन सेनाओं के सेनापतियों के अमुक अमुक नाम थे और उन के अधीन जो सरदार थे उन के अमुक अमुक। उन में हर एक के पास इतनी पैदल सेना, इतना रिसाला और इतनी तोपें थीं। उन्होंने अपनी अपनी सेना को लड़ाई के मैदान में इस क्रम से खड़ा किया था। उन्होंने अमुक अमुक युक्ति से काम लिया; अमुक अमुक तरह से धावा किया और अमुक अमुक तरकीब से वे पीछे हटे। दिन के इतने बजे उन पर अमुक प्रसंग आया, उन पर अमुक आफ़त आई और इतने बजे उन की ऐसी जीत हुई। एक धावे में अमुक सरदार काम आया; दूसरे में अमुक पल्टन कट गई। कभी इस दल का भाग्य चमका, कभी उसका। इस तरह भाग्य का उलट फेर होते होते अन्त में अमुक दल की जीत हुई। हर एक दल के इतने आदमी मर गये, इतने घायल हुए और इतने विजयी दल ने कैद कर लिये। अब बतलाइए कि इस युद्ध-वर्णन में जो बातें लिखीं गई हैं उन में कौन सी बात ऐसी है जिस से आप को यह शिक्षा मिल सकती है कि सार्वजनिक कामों में आप को कैसा बर्ताव करना चाहिए, इस में क्या कोई भी बात

ऐसी है जो आपको यह सिखला सकती है कि आप को अपना नागरिक चाल चलन कैसा रखना चाहिए ? मान लीजिए कि आप दुनिया की सर्व प्रसिद्ध पन्द्रह लड़ाइयों ही का हाल पढ़ कर चुप नहीं रहे; किन्तु और भी जितनी छोटी बड़ी लड़ाइयाँ हुई हैं उन सब का सविस्तार हाल आप पढ़ चुके हैं। तो क्या इस से, पार्रलियामेन्ट के मेम्बरों का अगला चुनाव होने पर, राय देते समय, आप की राय में कुछ विशेषता आ जायगी ? इस इतिहास-ज्ञान की बदौलत उस समय क्या आप कुछ विशेष बुद्धिमानी से राय दे सकेंगे ? हर्रागज़ नहीं। परन्तु आप कहेंगे कि—"ये सच्ची घटनाएँ हैं; सच्ची ही नहीं मनोरञ्जक भी।" निसन्देह ये मनोरञ्जक घटनाएँ हैं। इन में से जिन का कुछ अंश या सर्वांश झूठ नहीं वे अवश्य मनोरञ्जक हैं, और बहुत आदमियों को वे वैसी ही मालूम भी होती होंगी। परन्तु इस से यह अर्थ नहीं निकलता कि इस तरह की घटनाएँ महत्व की हैं—कदर करने के क़ाबिल हैं। हम लोग कभी कभी बिलकुल ही तुच्छ बातों को किसी कल्पित और अयोग्य कारण से भ्रमवश बनावटी महत्व देने लगते हैं। जो आदमी गुले-लाला या गुलाब के पीछे पागल हो रहा है—जिस के दिमाग़ में उसका खब्त समाया हुआ है—उसे यदि किसी अच्छे फूल के बराबर कोई सोना भी तौलने को

तैयार हो जाय तो भी वह उसे न देगा। कोई चीनी मिट्टी के महापुराने और दरके हुए बर्तन ही को एक अनमोल चीज़ समझ कर अपने पास रखता है। दुनिया में ऐसे भी आदमी हैं जो प्रसिद्ध हत्यारों का स्मरण दिलाने वाली चीजों को हज़ारों रुपये दे कर मोल लेते और अपने पास रखते हैं। परन्तु क्या इस तरह की रुचि-विचित्रता से ये चीजें कीमती हो सकती हैं? क्या ये चीजें सिर्फ इसलिए बहुत क़ीमती हो जायँगी कि अपनी विचित्र रुचि के कारण, कोई कोई इन को विशेष मूल्यवान् समझते हैं? यदि नहीं, तो इस बात को भी ज़रूर कबूल करना होगा कि कुछ ऐतिहासिक बातें, किसी किसी को बहुत पसन्द होने ही के कारण, कीमती नहीं हो सकतीं। इस तरह की पसन्द उनके महत्व पूर्ण होने का कोई सबूत नहीं। अतएव और बातों की कीमत हम जिस तरह उनके उपयोग का ख्याल करके ठहराते हैं उसी तरह इन बातों की भी कीमत उनके उपयोग का ख्याल करके ही ठहरानी चाहिए। जो चीज़ उपयोगी है वही क़ीमती है। जो जितनी अधिक उपयोगी है वह उतनी ही अधिक कीमती भी है। हरएक बात की उपयोगिता ही उसकी क़ीमत की माप है। यदि कोई आकर तुम से कहे कि तुम्हारे पड़ोसी की बिल्ली या कुतिया ने कल बच्चे दिए तो तुम कहोगे कि किसे

होंगे; हम को इस से क्या ? आप की यह खबर व्यर्थ है। इस से हमें क्या फ़ायदा ? इस से हमारा क्या उपयोग ? यद्यपि यह भी एक घटना है, और सही घटना है, तथापि तुम इसे बिलकुल ही व्यर्थ समझोगे। सांसारिक व्यवहारों से इस का कुछ भी सरोकार नहीं। तुम्हारी जिन्दगी के कर्तव्य कर्मों पर इस घटना का कुछ भी असर नहीं पड़ सकता। यह एक ऐसी घटना है जो तुम को अपनी ज़िन्दगी को पूरे तौर पर सार्थक करने में किसी तरह की मदद नहीं दे सकती। अच्छा, तो आप इसी उपयोग विषयक कसोटी से ऐतिहासिक घटनाओं के सम्बन्ध में भी काम लीजिए। उनकी भी कद्र और कीमत इसी कसोटी की मदद से निश्चित कीजिए। ऐसा करने से हम जो कुछ कर रहे हैं; वह आपको ज़रूर सच मालूम होगा। वह आप के ध्यान में ज़रूर आ जायगा। इतिहास में जो घटनायें बयान की जाती हैं, उनका कार्य्य-कारण-भाव नहीं दिखलाया जाता; उन में परस्पर क्या सम्बन्ध है; यह नहीं बतलाया जाता। उससे उन घटनाओं के—उन बातों के—अधार पर कोई सिद्धान्त स्थिर नहीं किया जा सकता। जितनी घटनायें है उनका एक मात्र उपयोग यह है कि उनकी मदद से हम अपने चाल-चलन-सम्बन्धी—हम अपने सांसारिक-व्यौहार-सम्बन्धी—नियम निश्चित कर सकें; हम यह जान सकें कि हमें

किस तरह का चाल-चलन अख्तियार करना चाहिए, किस तरह का व्यवहार पसन्द करना चाहिए। परन्तु इन ऐतिहासिक घटनाओं से हमें इस तरह की कोई शिक्षा नहीं मिलती; इन की मदद से हम इस तरह का कोई नियम निश्चित नहीं कर सकते। अतएव इन का जानना व्यर्थ है, ये हमारे किसी उपयोग की नहीं। हाँ, ऐतिहासिक घटनाओं को यदि आप दिल बहलाने के लिए पढ़ना चाहें तो खुशी से पढ़ सकते हैं। परन्तु इस बात की आप व्यर्थ आशा न करें—आप अपने दिल को व्यर्थ न फुसलावें—कि वे आप के किसी काम भी आ सकती हैं। उन से आप का कोई काम नहीं निकल सकता। वे आप के किसी उपयोग की नहीं।

भारतवर्ष की चौथी मनुष्य-गणना ।

मनुष्य-गणना की प्रथा बहुत पुरानी है। राज्य-सञ्चालन और प्रजा-हित साधन, दोनों में, इससे बहुत सहायता मिलती है। इसी से सभ्य और समुन्नत देशों के इतिहास में मनुष्य-गणना की प्रथा का उल्लेख पाया जाता है। सभ्यता के सूर्य्य की दिव्य ज्योति का विकाश सबसे पहले हमारे भारतवर्ष की भूमि पर ही हुआ था। अतएव यह सर्वथा सम्भव है कि यहाँ भी प्राचीन समय में मनुष्य-गणना की प्रथा सर्वत्र प्रचलित रही हो। चन्द्रगुप्त के समय में तो यहाँ अवश्य ही मनुष्य-गणना होती थी। चाणक्य ने अपने अर्थशास्त्र में इसका उल्लेख किया है। परन्तु हमारे यहाँ श्रृङ्खलाबद्ध इतिहास का सर्वथा अभाव है। इसी से यह नहीं मालूम होता कि प्राचीन समय में किस तरह मनुष्य-गणना होती थी और उस के द्वारा कौन कौन कार्य्य सम्पन्न होते थे।

रोम के इतिहास से विदित होता है कि सर्वियस ट्यूलियस (Servius Tullius) नामक राजा ने पहले पहल अपने राज्य में मनुष्य-गणना की प्रथा चलाई। उसके समय की मनुष्य-गणना में नाम, ग्राम आदि के सिवा प्रत्येक परिवार के मनुष्यों का पारस्परिक सम्बन्ध और उनकी सम्पत्ति की इयत्ता की भी जाँच होती थी। इससे प्रत्येक परिवार की शक्ति और विभूति का पता लगता था। उसी न्यूनाधिक्य पर विचार करके प्रजा को कई प्रकार के अधिकार दिये जाते थे और उसी हिसाब से कर भी लगाया जाता था। रोम के शासन कर्त्ताओं ने मनुष्य-गणना को इतना उपयोगी समझा कि कुछ दिनों बाद उन्होंने हर पाँचवें वर्ष मनुष्य-गणना करने की चाल चला दी।

सन् १७८७ ईस्वी में अमेरिका के युक्त संस्थानों (United States) की स्थापना हुई। उस समय यह निश्चय हुआ कि पूर्व-प्रतिष्ठित प्रादेशिक राज्यों को अपनी अपनी सीमा के भीतर स्वतन्त्र रूप से कार्य्य करने का अधिकार दिया जाय और अन्यान्य जातीय कार्य्यों के निमित्त राजनैतिक व्यवस्था दो तरह से हो—प्रादेशिक राज्यों के द्वारा तथा मनुष्यों की संख्या के अनुसार स्वतन्त्र रूप से। इसी राजनैतिक आवश्यकता के कारण वहाँ मनुष्य-गणना की प्रथा प्रचलित हुई। पहली मनुष्य-गणना

सन् १७९० ईसवी में हुई। तब से बराबर दसवें वर्ष वहाँ मनुष्य-गणना होती है। पहली गणना में बहुत कठिनता हुई थी और उसका फल भी असन्तोष-जनक आ था। परन्तु उसके बाद से बराबर यह कार्य्य अच्छी तरह सम्पन्न होता है और प्रति बार ज्ञातव्य विषयों की सूची बढ़ाई जाती है। १८५० ईसवी से अमेरिका की मनुष्य-गणना के समय कृषि, शिल्प, व्यवसाय, स्कूल, गिरजाघर, समाचार-पत्र आदि अनेक विषयों के सम्बन्ध में भी जाँच की जाती है।

ग्रेटब्रिटेन की पहली मनुष्य-गणना १८०१ ईसवी में, अर्थात् अमेरिका की पहली गणना के ११ वर्ष बाद, हुई थी। इस मनुष्य-गणना का उद्देश पूर्वोक्त रोम और अमेरिका की मनुष्य-गणना के उद्देशों से भिन्न था। राज्य सञ्चालन सम्बन्धी काम के लिए एक प्रधान समिति स्थापन करने तथा पुलिस का प्रबन्ध करने के लिए ग्रेटब्रिटेन के भिन्न भिन्न प्रान्तों के निवासियों की संख्या जानने की आवश्यकता हुई। इसी से वहाँ मनुष्य-गणना की प्रथा चली। पहली गणना में मनुष्यों की संख्या केवल तीन विभागों में बाँटी गई थी—(१) विशेषतः खेती करने वाले (२) विशेषतः व्यापार और शिल्प कार्य करने वाले (३) उक्त दोनों श्रेणियों में न गिने जाने योग्य मनुष्य। परन्तु यह गणना सन्तोष-दायक न हुई। तब से दसवें वर्ष वहाँ मनुष्य-गणना होती है। १८४१ तक तो

उसका फल सन्तोष जनक नहीं हुआ । किन्तु १८५१ से इधर यह काम बहुत उत्तम रीति से होता है । १८५१ में मनुष्यों के धर्म और शिक्षा के सम्बन्ध में भी जाँच की गई थी उसके बाद से प्रति मनुष्य-गणना की रिपोर्ट में नये उपयोगी विषयों का उल्लेख किया जाता है ।

भारतवर्ष के प्राचीन समय की मनुष्य गणना का विशेष वृत्तान्त ज्ञात नहीं । ब्रिटिश शासन के समय की मनुष्य-गणना का सिलसिला कोई पचास वर्ष से चला आता है । पहली मनुष्य-गणना १८६७ और १८७२ ईसवी के बीच में हुई थी । किन्तु उस समय हैदराबाद, काश्मीर, मध्यभारत, राजपूताना तथा पंजाब प्रान्त के देशी राज्यों की गणना नहीं हुई । अन्यान्य प्रान्तों की गणना भी एक ही समय नहीं हुई । इस कारण उस में अनेक प्रकार की त्रुटियाँ रह गईं । तो भी उससे बहुत लाभ हुआ । १८८१ ईसवी की १७ फ़रवरी को फिर मनुष्य-गणना हुई । इस दफे सब कहीं एक ही समय मनुष्यों की गिनती हुई और इसमें काश्मीर तथा सुदूरवर्ती कुछ छोटे छोटे राज्यों के सिवा बाकी सारे देशी राज्य सम्मिलित किये गये । मनुष्य-गणना के नियम प्रायः सर्वत्र एक ही से रक्खे गये । केवल कई जङ्गली और मरुप्रदेशों में कुछ नियमों में हेर फेर हुआ । यही गणना सरकारी रिपोर्ट में पहली मनुष्य-गणना कही गई है ।

दूसरी मनुष्य-गणना १८९१ ईसवी की २६ वीं फरवरी को हुई। इस बार के नियम प्रायः पहले ही के नियमों के सदृश थे। भेद केवल इतना ही था कि इस बार का प्रबन्ध पहले के प्रबन्ध से अच्छा था और इस बार की गणना में काश्मीर सिकिम और ऊपरी बङ्गदेश भी शामिल किया गया था।

१ मार्च १९०१ ईसवी को भारत की तीसरी मनुष्य-गणना हुई। उस समय बलूचिस्तान एजेंसी राजपूताने में भीलों की बस्तियाँ, अण्डमान तथा नीकोवर के टापू, बंग देश, पञ्जाब तथा काश्मीर की सीमा के अन्तर्गत प्रदेशों के मनुष्यों की भी गिनती हुई।

इस साल गत १० वीं मार्च की रात को जो मनुष्य-गणना हुई थी वह चौथी मनुष्य गणना है। इस मनुष्य-गणना में पहली गणनाओं की अपेक्षा उत्तमतर व्यवस्था की गई थी। कमिश्नर, सुपरिंटेन्डेन्ट, सुपरवाइज़र इन्यूमरेटर आदि सब मिलाकर कोई बीस लाख आदमियों द्वारा इस वर्ष की मनुष्य-गणना का कार्य्य सम्पन्न हुआ है।

इँगलेंड आदि देशों में जहाँ विद्या का अधिक प्रचार है, प्रत्येक परिवार का स्वामी मनुष्य गणना के काग़ज़ात अपने हाथ से लिखता है। इसी से गणना करने वालों को कुछ दिक्क़त नहीं होती। परन्तु हमारा देश अविद्या के अन्ध-

कार में पड़ा हुआ है। इस कारण गणकों ही को सब कागज़ात तैयार करने पड़ते हैं। कितने ही इन्यूमरेटर, अर्थात् गणक, भी बिना बताये काम करने के योग्य नहीं समझे जाते। अतएव कागजात पहले ही से तैयार कराये गये थे। गणना की रात को केवल इतना ही काम हुआ कि सुपरवाइज़र लोगों ने अपने अपने हल्के में घूम कर कागज़ात के सही होने की जाँच कर ली। जहाँ कहीं कुछ कमी वेशी देख पड़ी वहाँ संशोधन कर दिया।

अभी तक कागज़ात की जाँच पूरी नहीं हुई। इसी से इस मनुष्य-गणना की व्यौरेवार रिपोर्ट प्रकाशित होने में विलम्ब है। परन्तु तब तक गणना के कमिश्नर ने एक साधारण रिपोर्ट प्रकाशित कर दी है। यद्यपि यह रिपोर्ट प्रामाणिक नहीं मानी जा सकती; कागज़ात की जाँच के बाद इस में शायद कुछ सुधार करना पड़े; तथापि पहले के अनुभव से प्रतीत होता है कि यह रिपोर्ट बहुत कुछ ठीक होगी। इस रिपोर्ट से मालूम हुआ कि भारतवर्ष की मनुष्य संख्या ३१,५०,०१,०९९ है। उस में ब्रिटिश राज्य की जन-संख्या २४,४१,७२,३७१ है। और देशी राज्यों की ७,०८,२८,७२८। १९०१ ईसवी की गणना से मिलाने से विदित होता है कि गत दस वर्षों में सब मिलाकर २,०६,४०,०४३ आदमी बढ़े हैं। परन्तु वृद्धि सब प्रदेशों नहीं हुई। कितने ही प्रदेशों की संख्या बढ़ने के बदले

घट गई है। दुःख का विषय है कि युक्त-प्रदेश ही की जन-संख्या का अधिक ह्रास हुआ है। इस बार की गणना में युक्त-प्रदेश की संख्या १९०१ की अपेक्षा ४,९७,८४६ कम रही। इस का प्रधान कारण प्लेग का प्रकोप है। गया, नागपूर और इन्दौर की जन-संख्या भी इस वर्ष प्लेग के कारण बहुत कम हो गई।

रिपोर्ट के अन्त में गणना के कमिश्नर ने भिन्न भिन्न प्रान्तों के विषय में अपनी टिप्पणी प्रकाशित की है। उस से मालूम होता है कि गत दस वर्षों में किस प्रान्त की कैसी अवस्था रही और उसका क्या कारण था।

बङ्गाल के विषय में कहा गया है कि पहले चार वर्ष तक कृषि की दशा अच्छी रही। उस के बाद लगातार चार वर्षों तक फसल खराब होती गई। और, फिर पीछे दो वर्ष अच्छी उपज हुई। १९०६ में दरभङ्गा जिले में पहले भयङ्कर बाढ़ आई। पीछे पानी बिलकुल न बरसा। इस से उस साल वहाँ घोर दुर्भिक्ष पड़ा। १९०७ में बहुत जल्द वर्षा बन्द हो जाने के कारण बङ्गाल-प्रान्त भर में कहीं भी अच्छी फसल नहीं हुई। चार जिलों में लोगों को सहायता देने का प्रबन्ध करना पड़ा। १९०८ में फिर वही दशा हुई। इस का प्रभाव दस जिलों पर पड़ा। दो जिलों में तो दुर्भिक्ष पड़ गया। प्लेग का उपद्रव प्रति वर्ष होता ही रहा। बिहार के कितने ही

जिलों में इस रोग से बहुत मनुष्य मरे। गत दस वर्षों में बङ्गाल-प्रान्त भर में इस रोग से पाँच लाख छियानवे हजार आदमी मरे।

बम्बई के सम्बन्ध में कहा गया गया है कि १९०८—०९ तक इस प्रान्त के व्यापार की दशा अच्छी रही। किन्तु उस साल कपास का भाव बढ़ जाने से काम कुछ ढीला पड़ गया। १९०९—१० में व्यापार फिर कुछ चमका और कराची बन्दर का कारोबार पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ा। हर साल कोई सौ मील के हिसाब से रेलवे का विस्तार होता रहा और नहर का काम भी धीरे धीरे बढ़ता रहा। इस प्रान्त में प्लेग से तेरह लाख तेरह हजार आदमी मरे।

इस दशाब्दी में मध्य-प्रदेश और बरार की दशा बहुत शोचनीय रही। किसी साल अच्छी फसल नहीं हुई। १९०७ में वर्षा कम होने के कारण जबलपुर और नर्मदा प्रान्तों में लोग बहुत दुखी रहे; किन्तु अन्यान्य वर्षों में कई बार यहाँ अच्छी फसल भी हुई। पिछले वर्षों में लोगों ने कपास की खेती करना शुरू किया। इस से अच्छा लाभ हुआ।

मद्रास प्रान्त की फसल की दशा साधारणतः अच्छी रही। १९०६ से १९०८ तक वहाँ हैजे का प्रकोप रहा। इस के सिवा अन्य वर्षों में वहाँ का स्वास्थ्य अच्छा रहा।

इस दशाब्दी में वहाँ से बहुत आदमी उत्तरी बर्मा और लङ्का में जा बसे। कुछ लोग मलय प्रायद्वीप (Malay-States) को भी चले गये। किन्तु आख़िरी रिपोर्ट तैयार हुए बिना उन की ठीक संख्या नहीं बताई जा सकती।

इस दशाब्दी के आरम्भ में पूर्व-बङ्गाल और आसाम में चाय का व्यापार कुछ मन्द पड़ गया, परन्तु पीछे से उस की ख़ूब तरक्की हुई। १९०९ में तेईस करोड़ पौंड अर्थात् कोई २८७५००० मन, चाय इस प्रान्त में तैयार हुई। इसी बीच में आसाम-बङ्गाल रेलवे जारी हुई। और इस्टर्न बङ्गाल स्टेट-रेलवे का भी गोलकगञ्ज से गोहाटी तक विस्तार हुआ। यह प्रान्त अभी तक प्लेग से बचा हुआ है।

उत्तर पश्चिम सीमान्त प्रदेश में आबादी लायक जितनी ज़मीन है वह सब १९०१ के पहले ही प्रायः आबाद हो चुकी है। इस दशाब्दी में वहाँ सड़कों और रेलों का अधिक विस्तार हुआ। प्रान्त का स्वास्थ्य साधारणतः अच्छा रहा।

पञ्जाब में पहले दो वर्षों में बहुत कम उपज हुई। १९०१—०२ में देहली के इलाके और कांगड़ा ज़िले में, तथा उस के दूसरे वर्ष रोहतक और हिसार ज़िले में, लोगों को बहुत अन्नकष्ट हुआ। उस के बाद, १९०७—०८ के सिवा और सब सालों में साधारणतः

अच्छी फसल हुई। वहाँ प्लेग का उपद्रव बराबर बना रहा। कोई २० लाख आदमी इस बीमारी से मरे। इस के सिवा साधारण और फसली बुखार से भी कोई दस लाख अदमी मरे। इस प्रान्त की जन-संख्या बढ़ने के बदले फी सैकड़े २॥ के हिसाब से घट गई।

युक्त प्रदेश में १९०० ईसवी में, घोर दुर्भिक्ष पड़ा। उसके बाद चार वर्षों तक इस प्रदेश की दशा अच्छी रही। फिर १९०६ में रबी की फसल खराब हो गई। इस कारण बुन्देलखण्ड और आगरे के दक्षिणी प्रान्त में अकाल पड़ गया। १९०७ में खरीफ़ और रबी की उपज अच्छी होने से देश की दशा सुधरी। परन्तु अगस्त में फिर भी एकाएक वर्षा बन्द हो गई। इस से सब जगह घोर अकाल पड़ गया। १९०८ की खरीफ़ कटने तक इस का प्रकोप रहा। उस के बाद से अब तक फसल की दशा साधारणतः अच्छी रही है। प्लेग से इस प्रान्त में इस दशाब्दी में कोई पन्द्रह लाख आदमी मरे। फ़सली बुखार से मरने वालों की संख्या इस से भी अधिक है। उस से, केवल १९०८ में, कोई २० लाख आदमियों की मृत्यु हुई!!!

बर्म्मा की आबादी पहले बहुत कम थी। किन्तु इस बार की गणना से मालूम हुआ कि वहाँ की जन-संख्या बहुत बढ़ी है। इस के दो कारण हैं—एक तो वहाँ

बीमारी का उपद्रव अधिक नहीं, दूसरे मद्रास से बहुत लोग वहाँ आ कर बस गये हैं। वहाँ की जमीन बहुत उपजाऊ है। खेती की अवस्था सन्तोष-जनक है। गत दो वर्षों में वहाँ बहुत अच्छी उपज हुई। तेल के कारोबार में विशेष उन्नति हुई। व्यापार बढ़ा है। मज़दूरी भी पहले की अपेक्षा बहुत बढ़ गई है। देश का स्वास्थ्य साधारणतः अच्छा है।

ऊपर लिखी हुई बातों के आधार पर पाठकों को मनुष्य-गणना की रिपोर्ट पर विचार करने से कितनी ही ऐसी बातें मालूम हो सकती हैं जिन से देश और समाज के कु-संस्कार-निवारण और उन्नति-साधन में सहायता मिल सकती है।

मनुष्य-गणना के काग़ज़ों में एक खाना विवाह-सम्बन्धी जाँच के लिए रहता है। उम्र-वाले खाने के साथ उस का मुकाबला करने से यह जाना जा सकता है कि किस प्रान्त में किस उम्र तक ब्रह्मचर्य का नियम पाला जाता है। इस पर अच्छी तरह विचार करने से प्रत्येक प्रान्त के आदमियों के बल, बुद्धि, साहस आदि तथा आयु और नैरोग्य आदि का भी अन्दाज़ा लगाया जा सकता है।

विद्या-सम्बन्धी खाने को देखने से यह जाना जा सकता है कि किस प्रान्त में शिक्षा का कैसा प्रचार है

और कहाँ किस भाषा का अधिक प्रभाव है। शिक्षित और अशिक्षित जन-समाज के स्वाभाविक गुण-दोषों पर ध्यान दे कर इस खाने पर विचार करने से बहुत सी सामाजिक तथा राजनीतिक बातें जानी जा सकती हैं।

रोजगार-सम्बन्धी विवरण पर विचार करने से प्रत्येक प्रान्त के लोगों की आर्थिक दशा का पता लगता है। इस से प्रत्येक प्रान्त अथवा प्रत्येक जाति के लोगों के शील, स्वभाव आदि का भी अनुमान किया जा सकता है।

अँगरेजी पढ़े हुए लोगों के रहन सहन, आचार, विचार, रीत नीति; प्रवृत्ति-निवृत्ति आदि पर ध्यान दे कर यदि अँगरेजी शिक्षा-सम्बन्धी विवरण पर विचार किया जाय तो और भी कितनी ही उपयोगी बातें जानी जा सकती हैं।

बलरामपुर का खेदा ।

जंगली हाथियों को पकड़ने के लिए जो चढ़ाई की जाती है उसे खेदा कहते हैं । बलरामपुर में हर पाँचवें साल खेदा होता है । बलरामपुर अवध में एक रियासत है । हिमालय की तराई का बहुतसा हिस्सा इस रियासत में शामिल है । वहाँ हाथी बहुत रहते हैं । उन्हीं को पकड़ने के लिए खेदा होता है । हर साल खेदा इसलिए नहीं होता कि ऐसा न हो बहुत हाथियों के पकड़ लिये जाने से उनका वंश ही कुछ दिनों में नष्ट हो जाय । इसीसे हर पाँचवें साल हाथियों का शिकार होता है । इस शिकारी चढ़ाई में हाथी पकड़ कर क़ैद कर लिये जाते हैं, पर मारे नहीं जाते । हाँ पकड़ते समय किसी दुर्घटना के कारण यदि उनकी मौत हो जाय तो दूसरी बात है ।

गत बार बलरामपुर का खेदा २५ दिसम्बर, १९०४ से १५ फरवरी, १९०५ तक हुआ । इसके पहले जो खेदा

हुआ था उसमें युक्तप्रान्त के भूतपूर्व छोटे लाट सर अराटोनी मैकडानल्ड शामिल थे। इस खेदे की शोभा छोटे लाट सर जेम्स लटूश ने बढ़ाई। बलरामपुर में अनेक हाथी हैं। उनमें से जो खेदे के काम के थे वे सब हरद्वार के पास चिल्ला नामक जगह को भेज दिये गये। वहीं खेदे वालों का पड़ाव पड़ा। महाराजा बलरामपुर २१ दिसम्बर को बलरामपुर से रवाना हुए और २३ को सबेरे हरद्वार स्टेशन पर पहुँचे। वहाँ से वे अपने पड़ाव पर गये। छोटे लाट भी २४ तारीख़ को आ गये। उनसे महाराजा ने पूछा कि क्या आप बड़े दिन अर्थात् २५ दिसम्बर को, खेदे पर चलना पसन्द करेंगे? आपने उत्तर दिया, हाँ।

यथा समय सब शिकारी हाथी और आवश्यक आदमी खेदे के लिए रवाना कर दिये गये। उनसे कहा गया कि ज्योंही जङ्गली हाथियों की ख़बर मिले, महाराजा को सूचना दी जाय। यह ख़बर दिन के एक बजे आई, फौरन बिगुल बजाया गया। सब आदमी तैयार हो गये। जितने हाथी थे सब अपने अपने शिकारी सामान के साथ तैयार किये गये। ये सब फ़ौरन ही उस तरफ़ रवाना हुए जहाँ से दो जङ्गली हाथियों के देखे जाने की ख़बर आई थी। महाराजा और उनके साथी और मिहमान घोड़ों पर गये। सात मील चलने के बाद सबको घोड़े छोड़ कर हाथियों पर सवार होना पड़ा। शाम तक हाथियों की तलाश रही। पर एक भी

हाथी नज़र नहीं आया। दूर दूर से आदमियों के आने और शोर गुल मचाने से होशियार होकर सब हाथी न जाने कहाँ छिप रहे या भाग गये। इससे नाउम्मेद होकर वहाँ से सबको पड़ाव पर लौट आना पड़ा। उस दिन महाराजा बलरामपुर ने लाट साहब की दावत की। २६ दिसम्बर को खेदा नहीं हुआ। उस दिन छोटे लाट ने मामूली शिकार किया; हाथियों का नहीं।

२७ दिसम्बर को फिर हाथियों का पता लगा। खेदे के कप्तान नन्हेंखाँ हाथियों और बन्दूकचियों को लेकर सबेरे ही चल दिये। महाराजा १० बजे रवाना हुए और कोई एक बजे के क़रीब मौके पर पहुँचे। जब कोई जङ्गली हाथी देख पड़ता है और घात में आ जाता है तब सधे हुए हाथी उसकी गर्दन पर मोटे मोटे रस्से फेंक कर फन्दा लगाते हैं। ऐसे जितने हाथी थे सब अपनी अपनी जगह पर खड़े किये गये। अनेक लोग तमाशा देखने आये थे। उनको भी सुरक्षित जगहों में खड़े होने का प्रबन्ध हुआ, यह सब कप्तान नन्हेंखाँ ने किया। महाराजा और लाट साहब की दाहिनी और बाईं तरफ़ सब शिकारी हाथी खड़े किये गये। नागेन्द्र-गज और गजराज बहादुर नाम के दो विशाल गज महाराजा और सर जेम्स लटूश की रखवाली के लिए नियत हुए। सब लोग चुपचाप अपने अपने हाथियों पर बैठे। बैठे बैठे बहुत देर हुई। लाट साहब के सिवा और भी कई अँगरेज़

महाराजा के साथ थे । देरी से सब लोग घबरा उठे । किसी किसी से बिना बात किये रहा न गया । धीरे धीरे कानाफूसी होने लगी । यहाँ तक कि एक आध ने सोडावाटर की बोतलें तक फड़ाक फड़ाक खोल कर उनके भीतर की चीज़ को अपनी कण्ठ-नाल के भीतर पहुँचाया ।

इस खेदे में अनेक शिकारी और सवारी के हाथी थे । इन हाथियों की पीठ पर केवल एक गद्दा रहता है । इससे बैठने वालों को ज़रा तकलीफ़ होती है । पुरुषों को तो उतनी तकलीफ़ नहीं होती, पर स्त्रियों को अधिक होती है । खेदे में कई कोमल कलेवरा मेमें भी थीं । जितना बोझ उनके बदन का न था, उससे अधिक बोझ उनके गौन वग़ैरह का था । इस बोझ के कारण, और हाथी के ऊपर बैठने के लिए हौदा न होने के भी कारण, उन बेचारियों को कुछ अधिक कष्ट हुआ ।

सामने जङ्गल था । जितने शिकारी हाथी थे सब उसी तरफ़ ध्यान से देख रहे थे । उन हाथियों पर जो लोग सवार थे वे भी सब अपने अपने काम के लिए मुस्तैद थे । जहाँ कोई जङ्गली हाथी देख पड़ता है तहाँ शिकारी हाथी उसके पीछे दौड़ता है । परन्तु कभी कभी वह उसके बराबर नहीं दौड़ सकता; पीछे रह जाता है । इस हालत में मुँगरीवाला आदमी उसके पैरों में, या पूँछ के पास, मुँगरी से मारता है । मुँगरी

में छोटी छोटी कीलें रहती हैं। इस से उस की चोट लगने से हाथी को वेदना होती है और वह बेतहाशा दौड़ने लगता है। ये मुँगरी वाले भी अपनी अपनी मुँगरियों को लेकर जङ्गल ही की तरफ बड़े ध्यान से देख रहे थे। जो लोग जङ्गली हाथी पर शिकारी हाथी की मदद से फन्दा डालते हैं वे फन्दैत कहलाते हैं। वे बड़े बड़े रस्से लिए हुये मुँगरीवाले के आगे शिकारी हाथी पर बैठते हैं। वे भी अपना अपना रस्सा सँभाल कर हाथी को दौड़ाने के लिए तैयार थे। मुस्तैदी में परस्पर एक दूसरे की प्रतिस्पर्धा से भी, और लाट साहब को अपनी अपनी चालाकी दिखलाने के इरादे से भी, सब लोग जङ्गल की तरफ़ दौड़ लगाने के लिए एक पैर के बल खड़े थे कि एक बन्दूक की आवाज़ आई। मालूम हुआ कि कोई हाथी देख पड़ा। धारवाले अर्थात् बन्दूकची लोग, पहले ही जङ्गल में घुसते हैं। वे बन्दूकें दाग़ कर हाथियों को एक तरफ निकालते हैं। निकालते ही उन पर शिकारी हाथी बड़े बल विक्रम से धावा करते हैं।

पहले पहल कन्हैयाबख्श नाम के शिकारी हाथी ने एक जङ्गली हाथी को देखा। देखते ही उसने उस पर धावा किया। फिर क्या था, एक मिनट में सब हाथी वहाँ से ग़ायब हो गये। सिर्फ सवारी के हाथी रह गये। कोई तीन मील तक नरकुल का जङ्गल पार करने पर मैदान

मिला। वहीं शिकारी हाथियों ने जङ्गली हाथी को घेरा। पहले वह घेरे से निकल भागा। पर वह फिर घेरा गया। कन्हैयाबख्श, नागेन्द्रगज और राजमङ्गल नाम के शिकारी हाथी उस के दाहिने, बांये और सामने हुए। तब कई महावतों ने अपने हाथियों से उतर कर जङ्गली हाथी के पिछले पैरों को रस्से से बाँध दिया। यह कर के शिकारी हाथियों के ऊपर से जङ्गली हाथी के गले में फन्दे लगाये गये। फन्दे डाले जाने पर उन में कुटनी लगाई गई। कुटनी एक तरह की गाँठ का नाम है। इस तरह वह हाथी गिरफ्तार हो गया। कुछ पालतू हाथी उस के आगे, कुछ पीछे, और कुछ अगल बगल हुए। जङ्गली हाथी की गर्दन के रस्से पालतू हाथियों की गर्दन में बाँध दिये गये। इस तरह वह कैदी हाथी पड़ाव की तरफ रवाना हुआ। यदि रास्ते में वह कहीं अड़ जाता था तो शिकारी हाथी उसे पीछे से अपने दाँतों की चोट से मारते थे। यह चोट आवश्यकतानुसार कड़ी या धीमी होती है। यदि हाथी चलने से इनकार करता है तो शिकारी हाथी उस पर अधिक बल पूर्वक प्रहार करते हैं। दाहिने बांये के हाथी रस्सों से भी कभी कभी उसे पीटते हैं। पर इस नये हाथी पर अधिक मार पीट करने की जरूरत नहीं हुई। जिस समय इस जङ्गली हाथी के पिछले पैरों में रस्सा बाँधा जा रहा था उस समय लाट साहब भी वहाँ

मौके पर पहुँच गये थे। इस से उनकी अनुमति से इस हाथी का नाम "लाट्टूश बहादुर" रक्खा गया। इस खेदे के पहले जो खेदा हुआ था उस में एक हाथी का नाम "मैकडानल्ड बहादुर" रक्खा गया था। क्योंकि उस खेदे में सर अण्टोनी मैकडानल्ड शरीक थे।

३० दिसम्बर को फिर खेदे की तैयारियाँ हुईं। शिकारी हाथी और बन्दूकची लोग सबेरे ही जङ्गल की तरफ रवाना हुए। कोई १० बजे खबर आई कि जङ्गली हाथियों का पता लगा है। इसलिए लाट साहब और महाराजा घोड़ों पर सवार हो कर डेढ़ बजे के करीब मौके पर पहुँचे। कुछ देर बाद खेदा करने के लिए बन्दूक वाले जङ्गल में घुँसे। उन के पीछे शिकारी हाथी और शिकारी हाथियों के पीछे सवारी के हाथी चले। बीच में एक नाला पड़ा। खेदे के कप्तान नन्हें ख़ाँ ने सब लोगों को नाले के उस पार, जङ्गल में खड़ा किया। फन्दैती हाथी अपनी अपनी जगह पर खड़े हुए। गजराज-बहादुर और नागेन्द्रगज महाराजा और लाट साहब के पास रक्षक के तौर पर रहे। तब तक बन्दूक वालों ने हल्ला कर के जङ्गली हाथियों को जङ्गल से बाहर निकाला। बन्दूक की आवाज़ सुनाई पड़ने के कोई आध घन्टे बाद एक जङ्गली हाथी दिखाई दिया। उस पर नागेन्द्रगज ने धावा किया। महाराजा की हथिनी भगवतप्यारी भी

उस के पीछे दौड़ी। जङ्गली हाथी भागा। कभी वह नरकुल के जङ्गल में घुस जाता, कभी उस से भी घने पेड़ों और काँटेदार झाड़ियों के जङ्गल में। इस तरह बहुत देर तक वह इधर उधर भागता और शिकारी हाथियों को तङ्ग करता रहा। करीब ५ बजे शाम को वह सब तरफ से निकाला जा कर मैदान में बाहर आया। वहाँ मौक़ा पाते ही दो तीन शिकारी हाथी उस के पास पहुँचे और उस पर उन्होंने फन्दे डाल दिये। तीन फन्दे फेंके गये। तीनों सही हो गये। पर हाथी बहुत बिगड़ा हुआ था। फन्दों के रस्सों को जो दो हाथी पकड़े हुए थे उन को घसीटता हुआ वह जङ्गल की तरफ भागा। इतने में और भी कई शिकारी हाथी उस के पास पहुँच गये और वह खूब घेर लिया गया। कई बड़े बड़े हाथी उस के इधर उधर खड़े हुए। तब उस के पैरों में रस्सा डाला गया और गर्दन में और कई फन्दे लगाये गये। इस तरह वह खूब मजबूती के साथ गिरफ्तार कर लिया गया। तब वह पड़ाव की तरफ रवाना किया गया। चार शिकारी हाथी उस के आगे जोड़े गये और तीन पीछे एक दाहिने और एक बांये; ऐसे दो हाथी और उसके साथ हुए। रास्ते में एक आध जगह पानी पिला कर वह पड़ाव पर पहुँचाया गया। उस का नाम रक्खा गया "चण्डीप्रसाद।" उस में चण्ड भाव था भी

अधिक। पकड़ते समय उसने बहुत तङ्ग किया था। बाद में बाँध दिये जाने पर भी उसने अपना बन्धन तोड़ कर निकल जाने की बहुत कोशिश की। पर व्यर्थ।

इस खेदे में एक फ़ीलबान की पसली टूट गई। जिस समय शिकारी हाथी जङ्गली हाथी पर खेदा किये हुए थे, उस समय कालीप्रसाद नाम का हाथी अपने फ़ीलबान को ले कर बेतहाशा भागा और एक पेड़ के नीचे से निकला। पेड़ की लटकती हुई एक डाल फ़ीलबान की छाती पर लगी। उस के आघात से उस बेचारे की एक पसली टूट गई।

इस के बाद और कई खेदे हुए। कितने ही बड़े बड़े नर और मादा हाथी गिरफ्तार किये गये। छोटे छोटे पाठे भी कई मिले। एक पाठा जब पड़ाव को लाया जा रहा था तब कई दफे राह में बेहोश हो हो कर गिरा। पानी डाल कर वह होश में लाया गया। पर जान पड़ता था कि उस के पैर में चोट आ गई थी, इस से वह चल न सकता था। मालूम नहीं उस की क्या गति हुई।

जैसा ऊपर लिखा गया है, जब जङ्गली हाथी पकड़ कर पड़ाव को भेजा जाता है तब खेदे के हाथी उसकी गर्दन के रस्सों को पकड़ कर आगे चलते हैं। जो रस्से पिछले पैरों में बंधे रहते हैं उनको भी कई हाथी पीछे

से थाँमे रहते हैं। उस के दाहिने बांये भी कई हाथी चलते हैं। इस तरह वह नया कैदी जङ्गल से पड़ाव को लाया जाता है। अगर पड़ाव दूर होता है तो रात को बीच में कहीं ठहरना पड़ता है। पड़ाव पर पहुँचने पर वह एक बड़े पेड़ से बाँध दिया जाता है और चारा उस की सूंड़ की पहुँच में रख दिया जाता है। अपनी स्वतन्त्रता के छिन जाने पर कभी कभी हाथी को सख्त रंज होता है। कई दिन तक वह एक तिनका भी मुँह में नहीं डालता। जिन आदमियों की स्वतन्त्रता छिन जाती है क्या उन को भी कभी इस बात पर अफसोस या रंज होता है? कोई कोई हाथी बहुत समझदार होता है। वह समझ जाता है कि छूटने की कोशिश करने या खाने को न खाने से अब कोई लाभ नहीं। इस से दैववश प्राप्त हुई पराधीनता के सामने सिर झुका कर वह पहले ही दिन से खाना पीना शुरू कर देता है। लट्टूशबहादुर नाम का हाथी इसी पिछली नीति के स्कूल का था। जब उसे पहली दफे पानी पिलाने के लिए शिकारी हाथी रस्से थाँमे हुए पानी के पास ले गये तब उसने सिर तक नहीं हिलाया। अपनी दशा पर सन्तोष कर के चुप चाप उसने पानी पी लिया। पर चण्डीप्रसाद किसी दूसरे स्कूल का हाथी था। उसे इस तरह की नम्र नीति पसन्द नहीं आई। खाने पीने

में उसने बहुत तङ्ग किया और छूटने की कोशिश में पैरों के रस्सों को खींच खींच कर व्यर्थ परिश्रम किया। पकड़ते समय भी उस ने बड़ी वीरता दिखाई थी। नागेन्द्रगज को अपने नुकीले और बलवान दाँतों से उस ने घायल कर दिया था। चाहे जो कुछ हो, जो वीर हैं वे प्रबल शत्रु के सामने भी वीरता दिखाये बिना नहीं रहते। भेड़ बकरी की तरह, बिना हाथ पैर हिलाये, स्वतन्त्रता जैसी प्यारी चीज को वे हाथ से नहीं जाने देते।

जङ्गली हाथी आठ नौ महीने में सध जाते हैं। गर्दन और पैर रस्सों से खूब बँधे रहते हैं। इस से वहाँ का चमड़ा कट जाता है और घाव हो जाते हैं। उन में तेल और चरबी लगाई जाती है। पहले पहल इसी बहाने हाथी के बदन में हाथ लगाया जाता है। इस से हाथी को आराम मिलता है और धीरे धीरे वह उन लोगों को पहचानने लगता है जो उसे चारा पानी देते हैं। उस का जङ्गलीपन छूट जाता है। जब हाथी अच्छी तरह हिल जाता है तब वह सवारी या बोझ ढोने का काम देता है। कोई कोई खेदा के काम में भी लाये जाते हैं। जिस पराधीनता की पाश में पड़ते समय उन्होंने इतना तिरस्कार प्रकट किया था, उसी में वे अपने सजातियों को फँसाते हैं। अफसोस! हाथियों के

छोटे छोटे बच्चे तक पराधीनता नहीं पसन्द करते; पकड़ते समय वे बेतरह बिगड़ते हैं, पर कैद हो जाने पर अपने स्वातन्त्र्य-प्रेम को वे जल्द भूल जाते हैं।

जङ्गली हाथियों के पकड़ने की कई तरकीबें हैं। इस देश में भी कई तरह से हाथी पकड़े जाते हैं। पर जो तरकीब बलरामपुर में काम में लाई जाती है, वही अकसर मदरास और आसाम में भी काम में लाई जाती है।

लङ्का में बहुत हाथी होते हैं। वहाँ के हाथियों के दाँत अकसर नहीं होते। जङ्गली हाथियों को पकड़ने के लिए गवर्नमेंट का हुक्म दरकार होता है और कुछ कर भी देना पड़ता है। गरमी के मौसम में, बड़े बड़े गाँवों के जमींदार कोई दो हजार आदमी इकट्ठा करते हैं, वे हाथियों के झुण्ड को घेरते हैं। पानी कम हो जाने के कारण गरमी के दिनों में हाथी अकसर किसी तालाब या नदी ही के पास रहते हैं और दस बीस मिल कर एक साथ घूमते फिरते हैं। जहाँ हाथी होते हैं वहाँ से कुछ दूर पर मज़बूत लकड़ियों का एक वृत्ताकार घेरा या बाड़ा बनाया जाता है। जिस तरफ़ से उस में हाथियों के घुसने की उम्मेद होती है, उस तरफ़ घेरे का मुँह खुला रक्खा जाता है।

कई दिनों तक खेदे वाले हाथियों को घेरते हैं और धीरे धीरे लकड़ियों के घेरे की तरफ़ ले आते हैं। घेरा

घने जङ्गल के बीच में होता है। बन्दूकें दाग कर और ढोलक बजा कर हाथी ख़ूब डराये जाते हैं और घेरे के दरवाजे पर लाये जाते हैं। वहाँ और कोई जगह भागने के लिए न मिलने से वे घेरे के भीतर चले जाते हैं। उन के भीतर जाते ही दरवाज़ा बन्द कर दिया जाता है। बहुत आदमी बड़े बड़े भाले ले कर घेरे के चारों तरफ़ खड़े हो जाते हैं, जिस में जङ्गली हाथी उसे तोड़ कर बाहर न निकल भागें।

दूसरे दिन पालतू हाथी भेजे जाते हैं। हर हाथी पर उस का महावत रहता है और एक मोटा रस्सा हाथी की गर्दन से बँधा रहता है। उस रस्से का एक किनारा जमीन की तरफ़ लटका करता है। उस में फन्दा लगा रहता है। यह फन्दा एक आदमी अपने हाथ में थांमे रहता है और जङ्गली हाथी का खौफ़ मालूम होते ही पालतू हाथी के पेट के नीचे छिप जाता है। पालतू हाथी घेरे में घुस कर जङ्गली हाथियों का पीछा करते हैं। घेरे में उन के पीछे पीछे दौड़ते हैं। इसी समय जङ्गली हाथियों के पिछले पैरों में फन्दा डाला जाता है। फन्दा लग जाने पर वे बड़े बड़े पेड़ों से बाँध दिये जाते हैं। फन्दा लगाते समय जङ्गली हाथी बेतरह बिगड़ते हैं और बड़ी मुशकिलों में लोग फन्दा लगा पाते हैं। दो दिन बाद वे जङ्गल से बाहर लाये जाते हैं और

उन्हें चारा पानी दिया जाता है। कोई छः महीने में वे सध जाते हैं और बोझ ढोने या सवारी का काम देने लगते हैं। लङ्का में हाथियों को सागोन के लट्ठे बहुत ढोने पड़ते हैं।

सुनते हैं, पालतू हाथियों के ऊपर जो आदमी सवार रहता है उस पर जङ्गली हाथी वार नहीं करते।

युद्ध-सम्बन्धी अन्तर्जातीय नियम

सभ्य राष्ट्रों ने मिल कर कुछ ऐसे नियम बनाये हैं, जिनका पालन उन्हें युद्ध के समय करना पड़ता है। ट्रिपली के सम्बन्ध में टर्की और इटली का युद्ध शान्त हुआ ही था कि टर्की और बाल्कन प्रदेश के मान्टिनिगरो, सर्विया, बल्गेरिया और ग्रीस में युद्ध छिड़ गया। अतएव ऐसे अवसर पर उन नियमों का प्रकाशन असामयिक न होगा। वे नियम संक्षेप में, नीचे दिये जाते हैं—

जब कोई राष्ट्र किसी अन्य राष्ट्र को किसी तरह की हानि पहुँचाता है या उसका अपमान करता है तब उस से कहा जाता है कि हानि का बदला दो और अपमान के लिए माफ़ी माँगो। यदि सहज ही में यह काम हो जाता है तो युद्ध की तैयारी नहीं होती। हानि और अपमान करने वाले के शासन के लिए युद्ध अन्तिम साधन है। अन्य उपायों से जब तक काम चल सकता है तब तक युद्ध नहीं ठाना

जाता। राज़ीनामा कर लेना, किसी अन्य राष्ट्र का बीच में पड़ कर मेल करा देना, अथवा पञ्चायत द्वारा झगड़े का निपटारा हो जाना आदि बातों ही की, युद्ध के पहले, शरण लेनी पड़ती है। यदि इन से कार्य्य सिद्ध न हुआ तो वह राष्ट्र जिस का अपमान आदि होता है, बाहुबल का प्रयोग करता है। इस समय तक भी यथार्थ में युद्ध नहीं छिड़ता; शत्रु केवल तङ्ग किया जाता है। जहाजों द्वारा उस के बन्दरगाह और समुद्र-तट घेर लिये जाते हैं; तथा उस के जहाजों और माल असबाब पर अधिकार कर लिया जाता है। जब कोई समुद्र-तट या बन्दरगाह घिरा होता है तब किसी अन्य राष्ट्र का भी कोई जहाज घेरे के बीच से नहीं निकल सकता। घेरे के बीच से बाहर निकलते अथवा भीतर जाते हुए पकड़े जाने पर वह जब्त कर लिया जा सकता है। यदि युद्ध न हुआ, मेल हो गया, तो जितने जहाज अथवा जो माल हाथ लगता है वह सब जिन का होता है उन को लौटा दिया जाता है। शत्रु के समुद्र में फिरने वाले उसके अथवा उसकी प्रजा के जहाज भी पकड़ लिए जाते हैं। इस काम को Reprisal (अर्थात् बदला) कहते हैं। यह "बदला" दो प्रकार से लिया जाता है। राष्ट्र अपने शत्रु और उस की प्रजा के जहाजों और आदमियों को पकड़ने के लिए अपने कर्मचारियों को और गैर सरकारी लोगों को भी ऐसा ही करने के लिये अधिकार

देता है। परन्तु इस प्रकार के बदले की प्रथा अच्छी नहीं समझी जाती। युद्ध के पूर्व तो उसका अवलम्बन बहुत ही कम किया जाता है।

इतना होने के बाद या तो मेल हो जाता है या युद्ध छिड़ जाता है। यदि युद्ध हुआ तो ऐसी अवस्था में शत्रु को युद्ध की सूचना देने की कोई आवश्यकता नहीं। १८९४ ईसवी में चीन जापान में युद्ध हुआ था। छेड़छाड़ २५ जुलाई से आरम्भ थी। इसी तारीख़ को चीन का एक जहाज डुबो दिया गया था। और दूसरा जापान ने छीन लिया था। परन्तु युद्ध-घोषणा, जिस की फिर कोई आवश्यकता न थी, जापान ने पहली अगस्त और चीन ने दूसरी अगस्त को की थी। ऐसी ही बात गत रूस-जापान युद्ध में भी हुई थी। ६ फरवरी १८९४ को रूस और जापान का राजनैतिक सम्बन्ध टूट चुका था। तदनन्तर रूसियों की तरफ से कुछ छेड़ छाड़ भी हुई। परन्तु जापान ने युद्ध की घोषणा ११ फरवरी १९०४ को की।

जो सैनिक अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित हो कर लड़ने के लिए तैयार रहते हैं वही युद्ध में शरीक योद्धा समझे जाते हैं। युद्ध के नियमों के अनुसार शत्रु-दल के योद्धा मारे जाने और शरीर-दण्ड पाने के पात्र समझे जाते हैं। शरण आने पर वे युद्ध के कैदी समझे जाते हैं। और

वैसा ही व्यवहार भी उनके साथ किया जाता है। १८७४ में ब्रसेल्स की सभा में तै पाया था कि वही लोग योद्धा समझे जायँ जो किसी जिम्मेदार अफ़सर के नेतृत्व में हों, युद्ध के नियमों को जानते हों और किसी विशेष चिन्ह से पहचाने जा सकते हों।

कुछ विशेष अवस्थाओं को छोड़ कर अन्य सब अवस्थाओं में शरण चाहने वाले शत्रुदल के योद्धाओं को शरण अवश्य दी जाती है। परन्तु शरण मिल जाने ही से शत्रु के योद्धा दण्ड से नहीं बच सकते। यदि शत्रु ने स्वयं ही युद्ध के नियम तोड़े हैं अथवा अपने विपक्षियों को शरण न देने की सम्मति प्रकट की है तो उसके योद्धाओं को भी दण्ड मिलता है। शत्रु यदि कोई ऐसा कठोर या नृशंस काम करता है जिसका बदला देना आवश्यक समझा जाता है तो इस कारण भी शरण में आये हुए उसके योद्धा दण्ड के पात्र समझे जा सकते हैं। गत चीन जापान युद्ध में जापान ने शरण चाहने वाले शत्रु दल के प्रत्येक सैनिक को शरण दी थी। परन्तु एक दुर्घटना अवश्य हुई थी। वह यह थी कि पोर्ट आर्थर पर जापानियों का अधिकार हो जाने के बाद चार दिन तक नर हत्या हुई थी तथापि जापानियों के कथनानुसार उनके योद्धाओं ने यह नृशंसता नहीं की थी; किन्तु उनकी सेना के कुलियों ने शराब के नशे में की थी।

रोगी और घायल सैनिकों को—चाहे वे किसी दल के हों—उचित शुश्रूषा की जाती है। जब तक वे अस्पतालों अथवा अस्पताली जहाजों में रहते हैं तब तक वे किसी दल के नहीं समझे जाते। जितने डाक्टर घायलों की सेवा के लिए नियत रहते हैं वे भी किसी पक्ष के नहीं समझे जाते। दोनों पक्ष उनकी रक्षा के लिए एक से बाध्य हैं। अस्पतालों पर भी आक्रमण नहीं किया जाता। गत रूस-जापान में जापानियों का व्यवहार अपने रूसी कैदियों के प्रति साधारणतः, और उन में से जो रोगी अथवा घायल थे उन के प्रति मुख्यतः, बहुत ही अच्छा था। यूरुप और अमेरिका वालों तक ने जी खोल कर जापान के इस सद्-व्यवहार की प्रशंसा की। जापानियों के इस सद्व्यवहार की एक घटना का यहाँ उल्लेख कर देना अनुचित न होगा। कीनलोनथेङ्ग के युद्ध में एक रूसी सैनिक की आंखें घायल हो गईं। वह अपने एक साथी की सहायता से सेना के बाहर निकल आया। इतने ही में अचानक दो जापानी सैनिक घायलों की सेवा-शुश्रूषा करने वाले सेवक-समुदाय की झण्डी लिए हुए उस जगह पर पहुँचे। एक जापानी ने पिस्तौल द्वारा सङ्केत कर के घायल रूसी के साथी से चले जाने को कहा। जब वह चला गया तब दोनों ने मिल कर घायल रूसी सैनिक की आँखें धोईं, उन पर पट्टी चढ़ाई और तत्पश्चात् उसे उसके साथियों

के पास पहुँचा दिया। जापानी सैनिक अपने रूसी कैदियों के आराम का बहुत ही ख़याल रखते थे। बहुधा वे लोग रूसी कैदियों को अपना सिगरेट और शराब दे कर प्रसन्न रखने का प्रयत्न करते थे।

युद्ध के कैदी, युद्ध जारी रहते हुए, धन लेकर भी छोड़ दिये जा सकते हैं। दोनों पक्ष वाले अपने अपने कैदियों को बदल भी लेते हैं। वर्तमान युद्ध में शरीक न होने की शर्त पर कैदी छोड़ दिये जाते हैं। यदि कोई कैदी भागे तो वह भागने की अवस्था में मार डाला तक जा सकता है; परन्तु फिर पकड़े जाने पर उसे केवल इतना ही दण्ड दिया जा सकता है कि उस पर विशेष चौकसी रक्खी जाय। यदि वह अन्य कैदियों के भागने के षड्यन्त्र में सम्मिलित हो तो फिर वह प्राण-दण्ड ही का पात्र समझा जाता है। कैदियों को यथा-सम्भव अच्छा भोजन, वस्त्र और स्थान दिया जाता है; किसी किसी अवस्था में उनके जेब-खर्च का भी प्रबन्ध किया जाता है।

युद्ध में पकड़े तो सभी जा सकते हैं, परन्तु समाचार-पत्रों के संवाद-दाताओं के लिए यह नियम ढीला कर दिया जाता है। वे लोग केवल उस समय तक रोके जा सकते हैं जब तक उनके न रोकने से किसी प्रकार की हानि पहुँचने की सम्भावना हो। गत रूस-जापान-युद्ध में एक ऐसी ही घटना हो गई थी। अमेरिका के किसी

समाचार-पत्र के संवाद-दाता के जहाज़ को रूसियों ने पकड़ लिया। कुछ काल तक उक्त संवाद-दाता को रूसियों की हिरासत में रहना पड़ा। अन्त में वह छोड़ दिया गया।

युद्ध में किसी को धोखे से मारना मना है, परन्तु एक दल के सैनिकों का दूसरे दल वालों पर छिप कर छापा मारना मना नहीं। शत्रु के खाने पीने की चीज़ों में विष मिला देना, विष से बुझे शस्त्रों का प्रयोग करना और तोपों में नाल, शीशे और विविध धातुओं के टुकड़े तथा इसी प्रकार की अन्य चीजें भरना आदि बातें भी नियम विरुद्ध समझी जाती हैं। ज्वालाग्राही पदार्थों से भरे हुए गोले बड़े ही भयङ्कर होते हैं। जहाँ एक भी ऐसा गोला गिरता है, वहाँ सफाया ही हो जाता है। गोले जितने छोटे होंगे, उतने ही अधिक एक बार में चलाये जा सकेंगे और जितने ही अधिक गोले होंगे जहाँ तहाँ गिर कर, उतना ही अधिक भयङ्कर संहार वे करेंगे। इसीलिए आध सेर से कम वजन के ज्वाला-ग्राही-पदार्थ युक्त छोटे गोले युद्ध में नहीं चलाये जाते। १८७४ में ब्रसेल्स में, एक सैनिक सभा हुई थी। उसमें तै पाया था कि योद्धाओं को यह अधिकार नहीं है कि वे जिस तरह चाहें अपने शत्रुओं को मार डालें। इसलिए भावष्यत् में युद्ध के समय, अब ऐसे गोले न व्यवहार

में लाये जायँ जिनका काम फूट कर हवा को विषैला बनाना ही हो। सभा की इस बात को सब राष्ट्रों ने स्वीकार कर लिया।

समुद्र में बारूद की सुरङ्ग लगा कर शत्रु के जहाज़ नष्ट कर दिये जाते हैं। समुद्र में तट से तीन मील तक इस प्रकार की सुरङ्गें लगाने का हर राष्ट्र को अधिकार है। परन्तु ये सुरङ्गें होती बड़ी भयङ्कर हैं। यदि किसी प्रकार ढीली पड़ जायँ तो बहती बहती कहाँ की कहाँ पहुँच जायँ और केवल सैनिक जहाज़ों ही को नहीं, किन्तु उनसे टकरा जाने वाले व्यापारी जहाज़ों तक को नष्ट कर दें। इन सुरङ्गों की निरंकुशता पर सैनिक समुदाय भयभीत हो रहा है। हेग के महा-न्यायालय में इस विषय पर शीघ्र ही विचार होने वाला है।

जो सैनिक शान्ति सूचक झण्डियाँ लेकर या शत्रु के सैनिकों की वर्दी पहन कर शत्रुओं को धोखा देते हैं वे यथार्थ में रण-नीति के विरुद्ध कार्य्य करते हैं। नियम है कि जिस सैनिक के हाथ में शान्ति की झण्डी हो उस पर न तो वार किया जाय, न उसे और प्रकार का कष्ट पहुंचाया जाय, और न वह कैद ही किया जाय। गत रूस-जापान युद्ध में रूसियों ने एक बार इस नियम का उल्लङ्घन किया था। नानशन में युद्ध हो रहा था। रूसियों ने शान्ति के सफेद झण्डे ऊपर उठाये। जापानियों ने समझा कि वे

शरण चाहते हैं। युद्ध बन्द कर दिया गया। जापानी उन्हें कैद करने के लिए आगे बढ़े। पास पहुँचते ही रूसियों ने उन पर बन्दूक की बाढ़ें छोड़ीं। सैकड़ों जापानी मुफ्त में मारे गये! परन्तु अन्त में मैदान जापानियों ही के हाथ रहा।

अरक्षित और चहारदीवारी से न घिरे हुए नगर पर गोला-बारी नहीं की जाती। यदि ऐसे नगर का किसी सैनिक अड्डे से विशेष सम्बन्ध हो, अथवा उसमें रसद रक्खी पड़ी हो, तो फिर उस पर भी गोला-बारी की जा सकती है। जिस स्थान पर गोला-बारी की जाने को होती है वहाँ के निवासियों को सूचना द्वारा वहाँ से चले जाने की आज्ञा दे दी जाती है। परन्तु इस प्रकार की सूचना देना अथवा न देना आक्रमण-कारी पक्ष की इच्छा ही पर छोड़ दिया गया है। अपने अधीन रहने वाली असभ्य जातियों से लड़ाई में सहायता लेना अनुचित नहीं, परन्तु इन जातियों की सेना का आधुनिक ढँग पर शिक्षित होना आवश्यक है।

शत्रु पक्ष की टोह जासूस ले सकते हैं; परन्तु पकड़ जाने पर उन्हें फाँसी मिलती है। पहले तो गुब्बारे द्वारा उड़ने वाले लोगों तक को, युद्ध के समय पकड़ लिये जाने पर, जासूसों ही की तरह दण्ड मिलता था; परन्तु अब वह बात जाती रही है।

शत्रु-पक्ष के जहाजों पर, चाहे वे सामरिक हों चाहे व्यापारिक, उन्हीं स्थानों पर आक्रमण किया जा सकता है जो शत्रु अथवा आक्रमणकारी पक्ष के अधीन हों। किसी तटस्थ राजा के अधीन समुद्र में, अथवा बन्दर पर खड़े हुए, शत्रु-पक्ष के जहाज़ पर आक्रमण करने का अधिकार किसी को नहीं। जो जहाज़ वैज्ञानिक खोज के लिए निकले हों, जिनमें बदले हुए युद्ध के कैदी जा रहे हों, अथवा जिनमें रोगी और घायल तथा उनकी चिकित्सा का सामान हो—चाहे वे किसी पक्ष के हों—पकड़े नहीं जाते। शत्रु की प्रजा के उन जहाज़ों को छोड़ कर जो युद्ध के आरम्भ होने के पूर्व ही से दूसरे पक्ष के समुद्र अथवा बन्दर में पड़े हों अन्य सब जहाज़ युद्ध-काल में पकड़े और ज़ब्त कर लिये जाते हैं। समुद्र-तट के निकट रहने पर तो नहीं, परन्तु समुद्र-तट से दूर गहरे समुद्र में पहुँच जाने पर मछलियों का शिकार खेलने वाली शत्रु पक्ष की नावें भी पकड़ ली जाती हैं। युद्ध आरम्भ होने पर यदि कोई जहाज़ शत्रु-पक्ष के बन्दर पर माल लाद रहा हो, अथवा शत्रु-पक्ष के किसी बन्दर से चल कर अथवा किसी तटस्थ राष्ट्र के बन्दर की ओर जा रहा हो, तो वह एक नियमित समय तक नहीं पकड़ा जाता। बहुधा शत्रु-पक्ष के उन जहाज़ों को जिन में दूसरे पक्ष के किसी बन्दर का कुछ माल हो,

उक्त बन्दर में आने और एक नियत काल के भीतर वहाँ से सकुशल लौट जाने की आज्ञा मिल जाती है।

युद्ध आरम्भ हो जाने पर अन्य राष्ट्रों के जहाज़ों तक की बहुधा तलाशी ली जाती है। यह तलाशी इसलिए ली जाती है जिस में जहाज़ की यथार्थ राष्ट्रीयता का पता लग जाय और यह मालूम हो जाय कि उसमें किस प्रकार का माल है। और वह कहाँ जाता है। इस प्रकार की तलाशियाँ केवल युद्ध-काल ही में ली जाती हैं, शान्ति के समय में नहीं। तटस्थ राष्ट्रों के सैनिक जहाज़ कभी नहीं देखे जाते, हाँ उन के व्यापारी जहाज़ों की तलाशी बहुधा ली जाती है। तलाशी लेने के लिए जहाज़ पहले रोके जाते हैं। फिर उनका माल देखा जाता है कि वह ऐसा तो नहीं जिसका ले जाना युद्ध-काल में वर्जित है। सामुद्रिक डाकुओं के जहाज़, अथवा ऐसे जहाज़ जिन पर डाकुओं के होने का सन्देह हो, किसी भी समय पकड़े जा सकते हैं। व्यापारी जहाज़ राष्ट्रीय सेवा के लिए सैनिक जहाज़ का रूप धारण कर लिया करते हैं। परन्तु जो व्यापारी जहाज़ घर से तो व्यापारी बन कर निकलता है और रास्ते में सैनिक बन जाता है उसकी हैसियत सामुद्रिक डाकुओं के जहाज़ ही की तरह समझी जाती है।

युद्ध आरम्भ होते ही एक प्रश्न बड़े ही महत्त्व का उत्पन्न हो जाता है। वह यह कि कौन राष्ट्र तटस्थता की नीति का अवलम्बन करेगा और कौन दो पक्षों में से किसी एक की सहायता करेगा। तटस्थ राष्ट्र का कर्तव्य है कि वह दोनों पक्षों में से किसी को भी किसी प्रकार की सहायता न दे। लड़ने वाले पक्षों का कर्तव्य है कि तटस्थ राष्ट्रों के अधिकारों की कभी अवहेलना न करें। तटस्थ राष्ट्र किसी पक्ष को शस्त्रों से सहायता नहीं दे सकता, चाहे उसने युद्ध के पूर्व इस प्रकार की सहायता देने का किसी पक्ष को वचन ही क्यों न दिया हो। वह किसी पक्ष को ऋण भी नहीं दे सकता। वह किसी पक्ष की सेना को भी अपनी भूमि पर से नहीं निकलने दे सकता। वह जहाज़ या किसी प्रकार के शस्त्र नहीं बेच सकता। नियम है कि वह अपनी भूमि और अपने समुद्र पर दोनों पक्ष वालों को लड़ने न दे। यदि किसी पक्ष की सेना उसकी भूमि पर से निकलना चाहे तो उसे तितर-बितर कर दे; उसके शस्त्र छीन ले और उसकी सीमा में कैद किये गए किसी पक्ष के सैनिक कैदियों को छुड़ा दे। लड़ने वाले दलों का भी कर्तव्य है कि तटस्थ राष्ट्र के राज्य में किसी प्रकार का उत्पात न करें, न वहाँ सिपाही भरती करें और न वहाँ से किसी प्रकार की रसद ही लें। उनके

जहाज़ों को, यदि उन में कोई सन्देह-जनक माल न हो, वे न छेड़ें। यदि किसी प्रकार से उनके हाथों से तटस्थ राज्य को कोई क्षति पहुँचे तो उसकी पूर्ति करने और उसके लिए क्षमा माँगने को वे तैयार रहें।

उन्हीं जहाज़ों की तलाशी ली जाती है और वही जहाज़ पकड़े जाते हैं जिन पर "वर्जित" सामान हो। वर्जित सामान से युद्ध-सम्बन्धी वस्तुओं ही का मतलब है। घोड़े, गन्धक, शोरा, जहाज़ बनाने का सामान—जैसे शहतीरे, इञ्जिन, मस्तूल, बादबान, इञ्जिन की कलें, रस्सियाँ, ताँबा, राल और सन आदि चीजें—वर्जित समझी जाती हैं। जहाज़ पर रुपया, पहनने के कपड़े और कच्ची धातुओं का होना भी वर्जित मान लिया गया है। कोयला भी वर्जित वस्तु है, परन्तु उसका वर्जित होना इस बात के फ़ैसले पर अवलम्बित है कि उसका व्यवहार किस काम में होगा। यदि उसका व्यवहार किसी औद्योगिक काम के लिए नहीं, किन्तु किसी युद्ध-कार्य में होने वाला हो; तो उस की गणना भी, रणनीति के अनुसार, वर्जित वस्तुओं में होगी। गत रूस-जापान-युद्ध में रूस और जापान दोनों ने कोयले की गणना वर्जित ही वस्तुओं में की थी। उसी युद्ध में रूस ने कच्ची कपास को भी "वर्जित" बतलाया था। जब राष्ट्रों में इस विषय पर बड़ी हलचल मची तब

रूस ने अपनी दूसरी घोषणा में यह कहा कि कच्ची कपास ज्वालाग्राही पदार्थों के बनाने में काम आती है। इसीलिये वह "वर्जित" समझी जाती है। परन्तु सूत आदि शुद्ध कपास की चीज़ें जिनसे कपड़ा बुना जाता है "वर्जित" नहीं।

शत्रु राज्य में फैले हुये तार तोड़े और उस के खम्भे नष्ट-भ्रष्ट किये जा सकते हैं, परन्तु जिस तार द्वारा शत्रु का और किसी तटस्थ राज्य से सम्बन्ध हो उसका वही भाग तोड़ा जा सकता है जो शत्रु की भूमि पर हो। दो तटस्थ राज्यों के बीच में लगे हुए सामुद्रिक तार पर लड़ने वाले दल हस्तक्षेप नहीं कर सकते, परन्तु बहुधा ऐसा होता है कि लड़ने वाला वह राष्ट्र जो ऐसे तार के विशेष निकट हो उस पर इतना अधिकार प्राप्त कर लेता है कि जब चाहे तब वह उससे भी भेजी जाने वाली खबरों की जाँच पड़ताल कर सके। शत्रु के काग़ज़-पत्रों की गणना वर्जित वस्तुओं में है। जहाँ ऐसे काग़ज़-पत्र मिलते हैं, तुरन्त जब्त कर लिये जाते हैं।

यमलोक का जीवन ।

उत्तरी ध्रुव की ओर; आज तक अनेक साहसी योरोपियन गये हैं । तत्सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त करने के लिए बहुत चेष्टायें हुई हैं, और अब तक हो भी रही हैं । उस वर्ष डाक्टर नानसन उत्तरी ध्रुव में बहुत दूर तक निकल गये । वहाँ तक और कोई नहीं गया था । अपने भ्रमण का वृत्तान्त जो उन्होंने प्रकाशित किया है वह बहुत ही मनोरञ्जक है । उत्तरी ध्रुव की ओर तो बहुत लोगों का ध्यान था; परन्तु आज तक, दक्षिणी ध्रुव में सैर करने और उसकी व्यवस्था जानने का विचार दो ही एक आदमियों के मन में आया था । विद्या और सभ्यता की वृद्धि के साथ साथ नई नई बातें जानने, नये नये काम करने और नये नये देशों का पता लगाने के लिए मनुष्यों की प्रवृति सहज ही हो रही है । इसी प्रवृति के वशीभूत होकर दो एक साहब दक्षिणी ध्रुव की तरफ कुछ दूर तक गये भी; परन्तु थोड़ी ही दूर जाकर उनको लौट आना पड़ा ।

लोगों का ख्याल था कि उत्तरी ध्रुव की जैसी दशा दक्षिणी ध्रुव की नहीं; वहाँ जानने के लिए कुछ विशेष बातें भी नहीं। परन्तु कुछ काल से किसी किसी को दूर तक दक्षिणी ध्रुव में जाने की उत्सुकता बहुत बढ़ गई। यहाँ तक कि कुछ जर्मन लोगों ने उस दिशा की ओर बड़े बड़े जहाजों में प्रयाण भी किया। वे अभी तक वहीं हैं, उन्होंने दक्षिणी ध्रुव का बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त किया है। उनके भ्रमण वृत्तान्त के प्रकाशित होने पर वहाँ का विशेष हाल सुनने को मिलेगा। जर्मनी वालों की देखा देखी इंगलैंड से भी कुछ लोग दक्षिणी ध्रुव की ओर गये हैं। इन लोगों को इँगलैंड की रायल सोसायटी ने भेजा है। जो लोग गये हैं वे अभी तक लौटे नहीं। उनमें से डाक्टर शेकलटन बीमारी के कारण लौट आये हैं। उन्होंने लोगों के कौतूहल का निवारण करने के लिए इस चढ़ाई का संक्षिप्त वृत्तान्त प्रकाशित किया है। उन्हीं के वृत्तान्त के आधार पर इस दक्षिणी ध्रुव की चढ़ाई के सम्बन्ध में हम यह लेख लिख रहे हैं।

पौराणिकों का मत है कि दक्षिण में यम का वास है; अथवा दक्षिण यम की दिशा है। इसलिए उसे वे याम्य दिशा कहते हैं। जब दक्षिण याम्य दिशा हुई तब यम-लोक भी उसी तरफ हुआ। यही कारण है जो हमने इस लेख का नाम "यमलोक का जीवन" रक्खा है।

इस चढ़ाई का प्रबन्ध रायल सोसायटी और रायल जियाग्राफ़िकल सोसायटी ने किया। गवर्नमेंट ने भी ६,७५,००० रुपया दे कर इसकी सहायता की। इस के लिए "डिस्कवरी" नाम का एक खास जहाज तैयार किया गया। कप्तान स्काट उसके अधिकारी नियत हुए। यह धूमपोत इंग्लैंड के काउस स्थान से, महाराज सातवें एडवर्ड और उनकी महारानी के सामने, ६ अगस्त १९०१ को छूटा। इस पर सरकारी सामुद्रिक विभाग के चुने हुए ११ अफसर और २७ मनुष्य भेजे गये। उनके साथ उत्तरी ध्रुव के २३ कुत्ते भी भेजे गये। ये कुत्ते बर्फ के ऊपर छोटी छोटी गाड़ियाँ खींचने के लिए थे।

१५०० मील की यात्रा कर के यह धूमपोत ९ जनवरी १९०२ को दक्षिणी ध्रुव के किनारे पहुँचा। दक्षिणी ध्रुव के आस पास का प्रदेश आस्ट्रेलिया के बराबर है। वहाँ पहुँच कर, जहाँ तक हो सका, इस चढ़ाई ने अपना काम किया; अनन्तर इस को यरबस नामक सजीव ज्वालामुखी पहाड़ के पास ठहर जाना पड़ा। क्योंकि जाड़े के दिन आ गये और बर्फ अधिक पड़ने के कारण चढ़ाई के लोग और अधिक काम न कर सके। ८ फरवरी को काम बन्द हुआ। सब लोग बर्फ से बचने और दक्षिणी ध्रुव की लम्बी रात में आराम

मे रहने का प्रबन्ध कर के ठहर गये। वहां की रात २ अप्रैल से २७ अगस्त तक रहती है। रात का आरम्भ हुआ बर्फ भी खूब पड़ने लगी। ४०० मील तक समुद्र के ऊपर बर्फ जम गया। "डिस्कवरी" का सम्बन्ध बाहरी दुनियाँ से बिलकुल ही छूट गया।

नवम्बर १९०२ में कप्तान स्काट, डाक्टर विलसन और लेफ्टिनेंट शैकलटन ने सब कुत्ते साथ लिये और स्लेज नाम की छोटी छोटी गाड़ियाँ ले कर वे बर्फ के ऊपर दक्षिणी ध्रुव की ओर दूर तक चले गये। मार्ग में उनको सख्त तकलीफें हुईं। तथापि वे ८२.१७ अंश तक दक्षिण की ओर गये और वहाँ उन्होंने अँगरेजी झण्डा गाड़ा। दक्षिणी ध्रुव वहाँ से ४६७ मील रह गया। आज तक जितने लोग दक्षिणी ध्रुव की तरफ गये थे, उन सब से वे लोग २०७ मील और आगे बढ़ गये। इस चढ़ाई की सहायता के लिए और इसे भोजन वस्त्र इत्यादि पहुँचाने के लिए पीछे से दो धूमपोत और भेजे गये। उन्हीं में से "मार्निङ्ग" नाम के धूमपोत में लेफ्टिनेंट शैकलटन, बीमार हो जाने के कारण, इँगलैंड लौट आये। उन्होंने दक्षिणी ध्रुव की जीवन-यात्रा के सम्बन्ध में जो कुछ प्रकाशित किया है उसका सारांश उन्हीं के मुँह से सुनिए।

उत्तरी ध्रुव की अपेक्षा दक्षिणी ध्रुव में शीत अधिक

है। उत्तरी ध्रुव के जिस अंश में जितना शीत है, दक्षिणी ध्रुव के उसी अंश में उस शीत की अपेक्षा बहुत अधिक है। पृथ्वी का वह भाग जो दक्षिणी ध्रुव के आस पास है इतना शोभाशाली है कि एक बार वहाँ जाकर फिर लौटने को जी नहीं चाहता। वहाँ के शीत की, वहाँ की तकलीफों की और वहाँ की निर्जनता की कुछ परवा न कर के पुनर्वार वहाँ जाने की इच्छा होती है। उस की प्राकृतिक शोभा कभी नहीं भूलती। वह वहाँ बलात् ले जाने के लिए चित को उत्कण्ठित किया करती है।

चलते चलते एक दिन सहसा हम लोगों को कुछ सफेदी नजर आई। वह सफेदी बर्फ के छोटे छोटे टुकड़ों की चादर थी। हमारा जहाज़ (डिस्कवरी) धीरे धीरे उस बर्फ को फाड़ता हुआ आगे बढ़ने लगा। कुछ देर बाद हमारे दाहिने बाँये और आगे पीछे समुद्र शुभ्र रजतमय हो गया। बर्फ की सफेद लाइन, जिस तरफ नज़र उठाइए उसी तरफ देख पड़ने लगी। उस बर्फ के ऊपर सील नामक मछलियां और पेनगुइन नामक चिड़ियां आनन्द से खेल रही थीं। सीलों ने तो हमारी कुछ परवा न की। उन्होंने हमारी तरफ नज़र तक नहीं उठाया। परन्तु पेनगुइन चिड़ियाँ एक विलक्षण प्रकार की आवाज़ करते हुए हमारी तरफ दौड़ीं। हमारे जहाज़ को देख कर उन्हें

आश्चर्य सा हुआ। उन्होंने शायद अपने मन में समझा कि यह कोई महाबलवान दानव उनके घर में घुस आया है। ये चिड़ियाँ बहुत बड़ी न थीं। उन की छाती सफ़ेद और पीठ काली थी।

पाँच रोज तक इस पतले बर्फ को फाड़ता हुआ हमारा जहाज़ चला गया। उस रोज हमको दक्षिणी ध्रुव के पास का प्रदेश देख पड़ा। बर्फ से ढके हुए इन आकाश भेदी पर्वतों का दृश्य हमको कभी न भूलेगा। १० से लेकर १५ हजार फुट तक वे स्वच्छ और निरभ्र नीले आकाश के भीतर चले गये थे। वहाँ पर हम लोगों के लिए बहुत कम काम था। पौधों और जीवधारियों के नमूने हम लोगों को लेने थे। परन्तु वहाँ पर दो एक सामुद्रिक पौधे, सील और पेनगुइन के समान दो चार चिड़ियों को छोड़ कर और कुछ था ही नहीं। यह बात उत्तरी ध्रुव में नहीं। वहाँ अनेक प्रकार के वनस्पति और पशु पक्षी पाये जाते हैं।

दक्षिणी ध्रुव में एक प्रकार की सील बहुत अधिकता से होती है। उसी पर हम लोग प्रायः बसर करते थे। तौल में वह कोई १४ मन होता है। ये मछलियाँ बर्फ के ऊपर धीरे धीरे घूमा करती हैं; आदमी से वे जरा भी नहीं डरतीं। उन्होंने कभी आदमी देखा ही नहीं। अतएव मारने के लिए भी यदि आदमी उन के पास

पहुँचते हैं तब भी वे अपनी जगह से नहीं हटतीं, परन्तु पेनगुइन का मिज़ाज इतना सीधा नहीं। वे आदमी को देख कर उस पर हमला करने के लिए दौड़ती हैं। इन चिड़ियों के घोंसले बहुत छोटे और भद्दे होते हैं। जब ये चिड़ियाँ अपने बच्चों को खिलाती हैं तब उनको देख कर बड़ा आनन्द आता है। बच्चों के माँ-बाप पास वाली समुद्र की उथली खाड़ियों की ओर उड़ जाते हैं। वहाँ वे मछलियों वगैरह का शिकार करके अपने मुँह में रख लेते हैं। जब मुँह भर जाता है तब वे अपने घोंसलों को उड़ आते हैं। वहाँ आते ही उनके बच्चे उनके मुँह में अपनी चोंच डाल कर बड़े प्यार और बड़े प्रेम से उन लज़ीज़ चीज़ों को खाते हैं।

जिस समय का ज़िक्र है, वह ग्रीष्मऋतु थी। ग्रीष्म क्या उसे वसन्त ही कहना चाहिए। किसी किसी दिन आकाश निरभ्र और सूर्य चमकीला नज़र आता था। जब सूर्य की किरणें बर्फ़ के ऊँचे ऊँचे टीलों पर पड़ती थीं तब बड़ा कौतुक मालूम होता था। उनको देख कर तबियत बहुत ख़ुश होती थी। जान पड़ता था कि तपाये हुए सुर्ख़ सोने के तार सूर्य मण्डल से उन राशि-राशि मय बर्फ़ के शिखरों तक फैले हुए हैं। यह ऋतु सिर्फ़ छः हफ़्ते रहती है। १६ दिसम्बर से ३१ जनवरी तक ही यह शोभा देखने को मिलती है।

जिस दिन अरबस नामक ज्वालामुखी पर्वत हम लोगों को पहले पहल दिखलाई दिया, वह दिन हमें बखूबी याद है। इस पर्वत का पता, ६० वर्ष हुए सर जेम्स राल ने लगाया था। यह पर्वत १२,५७० फुट ऊँचा है। जब हम लोग उसके पास पहुँचे, हमने देखा कि उसके मुँह से धुएँ की धारा भक भक निकल रही है। जहाँ चारों ओर बर्फ के ऊँचे ऊँचे टीले खड़े हुए हैं, जहाँ समुद्र ही बर्फमय हो गया है, वहाँ इस ज्वालागर्भ पर्वत को देख कर बड़ा विस्मय होता है। जहाँ प्रचण्ड शीत वहाँ अग्नि वमन करने वाला पर्वत! परन्तु प्रकृति बड़ी विचित्र है। वह अपनी विचित्रता के ऐसे ही ऐसे विलक्षण उदाहरण कभी कभी दिखलाती है। इस पहाड़ के नीचे ही, कुछ दूर पर, हम लोगों ने शीत ऋतु बिताने के लिए, रहने का स्थान बनाना चाहा। हमको आशा थी कि यहाँ रहने से हम लोगों को कुछ गरमी मिलेगी; परन्तु हमारा यह ख़याल बिलकुल ही ग़लत निकला।

पहले तो हम लोगों को बहुत गरम कपड़े नहीं पहनने पड़े; परन्तु कुछ काल में थर्मामीटर का पारा शून्य (०) के नीचे चला गया। तब हम लोगों ने निहायत गरम कपड़े निकाले। मोटे चमड़े के बूट भी सर्द मालूम होने लगे। इस कारण से सम्बूर के बूट पहनने की जरूरत पड़ी।

बर्फ की वर्षा अधिक हो गई। हमारा जहाज़ बड़ी मुश्किल से आगे बढ़ने लगा। हम लोगों को भय हुआ कि कहीं नियत स्थान पर पहुँचने के पहले ही जहाज़ न रुक जाय। परन्तु राम राम करके किसी तरह हम लोग वहाँ तक पहुँचे जहाँ हमने जाड़ा व्यतीत करने का निश्चय किया था। हमको मालूम था कि १२२ दिन की रात आने वाली है। इसलिए बहुत जल्द हमने ठहरने का प्रबन्ध किया और सब सामान ठीक करके जहाज़ का लङ्गर डाला।

ज्यों ही जहाज़ ठहरा और उसके चारों तरफ़ बर्फ का ढेर इकट्ठा हुआ; त्योंही हम लोगों ने बर्फ में बड़े बड़े बाँस गाड़ दिये और किनारे तक गाड़ते चले गये। फिर लम्बे लम्बे रस्से ले कर हमने उन बाँसों पर बाँधे। बिना यह किये हम लोगों को जहाज़ का पता लगाना मुश्किल हो जाता। तब किनारे पर एक झोंपड़ा बनाया गया और उसमें थर्मामीटर और बारोमीटर इत्यादि, यन्त्र रक्खे गये।

सूर्य बिलकुल ही आकाश से लोप होने को हुआ। परन्तु उसका सम्पूर्ण तिरोभाव होने के पहले, एप्रिल के महीने में, कई दिनों तक २४ घण्टे का उषःकाल रहा। अस्ताचल गामी सूर्य की किरणों के सुन्दर रङ्ग बर्फ के संयोग से उतना मनोहर दृश्य दिखलाने लगे कि उनका वर्णन साधारण मनुष्य से होना असम्भव है। उस शोभा को चित्रित करने के लिए कालिदास या शेक्सपियर की

लेखनी ही समर्थ हो सकती है।

ध्रुव-प्रदेश की रात एक ऐसी वस्तु है जिसकी समता संसार की और किसी वस्तु से नहीं की जा सकती। वह सर्वथा अनुपमेय है। वह कैसी होती है, यह जानने के लिये उसे आँख ही से देखना चाहिए। लिखने या बतलाने से उसका जरा भी अनुमान नहीं हो सकता। ज्योंही रात हुई और शीत बढ़ा त्योंही हम लोगों ने समूर के कोट बूट और टोपियाँ वग़ैरह निकालीं। मोटे मोटे ऊनी कोटों के ऊपर हमने शीतल हवा से बचने के लिए, एक विशेष तरह का "ओवर कोट" भी पहना। बर्फ़दंश एक प्रकार का रोग होता है। उसके होने का हम लोगों को पल पल पर डर मालूम होने लगा। हम लोग एक दूसरे के मुँह की तरफ देखने लगे कि कहीं बर्फ़दंश के चिन्ह तो नहीं दिखाई देते। जिसे बर्फ़दंश होता है उसे ऐसा जान पड़ता है कि बर्र ने डङ्क मारा। जिसे इस तरह का दंश होता था वह फ़ौरन अपना दस्ताना उतार कर उस जगह को देर तक रगड़ता था। ऐसा करने से पीड़ा कम हो जाती है और विशेष विकार नहीं बढ़ता। परन्तु यदि ऐसा न किया जाय तो उस जगह मांस के गल जाने का डर रहता है।

यहाँ पर बहुत सख्त जाड़ा पड़ता है। जाड़े का अनुमान करने के लिए हम यह लिख देना चाहते हैं कि हम लोग २ या ३ मिनट से अधिक अपने हाथों को दस्ताने के

बाहर नहीं निकाल सकते थे। यदि इससे जरा भी अधिक देर लग जाय तो फौरन ही बर्फदंश हो जाय। इतना जाड़ा पड़ने पर भी मुँह के आस पास का भाग बिलकुल खुला रखना पड़ता था। अगर खुला न रक्खा जाय, या किसी चीज़ से ढक दिया जाय, तो मुँह से निकली हुई साँस फौरन जम जाय, यहाँ तक कि उसके जमने से आँखों की बौरनियाँ चिपक जायँ। ऐसा होने से हम लोग कुछ देर के लिए अन्धे हो जायँ। नंगे हाथ से हम लोग धातु की कोई चीज नहीं छू सकते थे। अगर छूते तो फौरन ही एक सफेद सफेद दाग पड़ जाता और उस जगह पर बर्फदंश की पीड़ा होने लगती। एक दिल्लगी सुनिए। एक टीन में कोई चीज़ रक्खी थी। वह टीन बर्फ के ऊपर पड़ी थी। उसे हमारे एक कुत्ते ने देखा और जबान को भीतर डालकर उसे वह चाटने लगा। बस दो तीन दफे जबान लगाने की देर थी कि वह वहीं चिपक गई। कुत्ता बेचारा चीखने और दर्द से बेकरार होने लगा। यह तमाशा एक खलासी ने देखा। वह वहाँ दौड़ा गया। बलपूर्वक उसने उस टीन को कुत्ते की जबान से अलग किया।

जोर से जाड़ा पड़ने के पहले हम लोगों ने अपनी छोटी छोटी बेपहिये की गाड़ियों में कुत्ते जोते और जहाज से कुछ दूर आगे का सफ़र करना विचारा। हम लोग रवाना हुए। बारह घण्टे तक हम बाहर रहे। इस बीच में बर्फ का

एक सख्त तूफ़ान आया। इस से हम लोगों की बड़ी दुर्दशा हुई। मुँह में, और हाथों में भी, बर्फदंश की पीड़ा होने लगी। इसलिए हमने तत्काल अपने छोटे छोटे खेमे खड़े किये। और बड़ी मुश्किल से हाथ पैरों के बल रेंग कर उनके भीतर हम घुस गये। यदि ऐसा करने में और जरा देर हो जाती तो हम लोगों का काम वहीं तमाम हो जाता।

लेफ्टिनेंट राय्डस और मिस्टर स्केल्टन भी कुछ आदमियों के साथ, बेपहिये की गाड़ियाँ लेकर, हमारे जहाज से कोई ६० मील दूर तक चले गये। इन गाड़ियों को कुत्ते खींचते थे। रास्ते में एक भयानक बर्फ का तूफ़ान आया। इस कारण इन लोगों को पाँच दिन तक छोलदारी के भीतर बन्द रहना पड़ा। जब तूफ़ान बन्द हुआ तब इन्होंने देखा कि छोलदारी के ऊपर नीचे, इधर उधर, सब कहीं बर्फ जम गई है। बड़ी कठिनाई से बर्फ को कुदालियों से काट कर ये लोग उसके भीतर से बाहर आये। समुद्र के जम जाने के कारण हम लोगों ने, इसी प्रकार, इन छोटी छोटी गाड़ियों पर दूर दूर तक सफ़र किया और जीव-जन्तु, बनस्पति, भूगोल और भूस्तर-विद्या-सम्बन्धी अनेक जाँचें कीं; और अनेक प्रकार की वस्तुओं के नमूने इकट्ठे किये।

इस चढ़ाई में कुत्तों ने बड़ा काम किया। हमारे पास २३ कुत्ते थे। क्या ही अच्छा होता यदि

कुत्ते ले गये होते। एक एक कुत्ता सवा मन के करीब बोझ से लदी हुई गाड़ी खींचता था। इन कुत्तों में कुछ कुतियाँ भी थीं। जाड़े में उनके ९ पिल्ले पैदा हुए। परन्तु वे बहुत छोटे हुए। वे अपने माँ-बाप के न तो डील-डोल में बराबर हुए और न बल में।

हमारे साथ एक बिल्ली भी थी। एक दफे रात को हमारे झोंपड़े के ऊपर वह गई। वहाँ वह कुछ अधिक देर तक रही। जब वह भीतर आई तब हम लोगों ने देखा कि उसका एक कान ही नदारद है। अगर ज़रा देर वह और वहाँ रहती तो शायद वह वहाँ से ज़िन्दा न लौटती।

आठ बजे सुबह हम लोग भोजन करते थे। खाने की सामग्री में हलुआ, सील मछली का गोश्त, रोटी, मक्खन, मुरब्बा, चाय और कहवा मुख्य चीज़ें थीं। ९ बजे ईश्वर की प्रार्थना होती थी। प्रार्थना-पाठ जहाज का कप्तान करता था। फिर सब आदमी अपने अपने काम में लग जाते थे। कुछ आदमी सोने के वास्ते थैलियाँ सींते थे; इन्हीं थैलियों के भीतर हम लोग रात को घुसे रहते थे। कुछ उन थैलियों की, और दूसरे कपड़ों की मरम्मत करते थे; कुछ जहाज के ऊपर जमे हुए बर्फ को साफ करते थे, कुछ जहाज पर पड़े हुए मोम-कपड़े की मरम्मत करते थे, क्योंकि बर्फ के गिरने से उसमें सैकड़ों छेद हो जाते थे। कुछ आदमी सील मछलियों और चिड़ियों की खाल खींच कर उनमें

मसाला भरते थे। ये चीज़ें इंग्लैंड को लाये जाने के लिए नमूने के तौर पर रक्खी गई हैं। कुछ आदमी जलचर जीवों की तलाश में जाते थे; कुछ वनस्पतियों को खोजने निकल जाते थे; और कुछ भूस्तर-विद्या के विषय में ज्ञान प्राप्त करने को बाहर निकलते थे। एक बजे फिर हम लोग भोजन करते थे। आठ बजे रात को जहाज की देख भाल होती थी और बाद उसके हम लोग ताश वग़ैरह खेल कर सो रहते थे।

हम लोगों ने "साउथ पोलर टाइम्स" नाम का एक अख़बार भी लिखना शुरू किया। वह महीने में एकबार लिखा जाता था। जहाज पर जितने अफ़सर थे, सब उसमें लेख लिखते थे; और लोग भी कोई कोई उसमें लिखते थे। लेखों में इस चढ़ाई का सविस्तार वर्णन रहता था। इस अख़बार के अङ्क अभी तक प्रकाशित नहीं हुए। चढ़ाई के लौट आने पर वे इंग्लैंड में प्रकाशित होंगे।

वहाँ बाहर कोई पौधा नहीं हो सकता था। मगर हम लोग इंग्लैंड से एक बक्स में थोड़ी सी मिट्टी ले गये थे। उसीमें हमने "क्रोक्यूसेज़" नामक पौधे के बीज बोये। उनमें से दो पौधे हुए। फूल भी उनमें यथासमय निकले। "गुड फ्राइडे" को हम लोग उन फूलों को देख कर बहुत प्रसन्न हुए। हमारे जहाज में वह मानों हमारा एक छोटा सा फूलबाग था।

किसी किसी रात का दृश्य बड़ा ही मज़ेदार था। जिस समय पूरा चन्द्रबिम्ब आकाश में उदित होता था उस समय वह सारा प्रदेश दुग्धफेन के समान शुभ्र दिखलाई देता था। कभी कभी उत्तर की ओर, दूर, सफ़ेद रोशनी का एक धुँधला पुञ्ज देख पड़ता था, जिस से मालूम होता था कि सूर्य ने अपना मुँह ढाँप रक्खा है; तथापि वह वहीं पर कहीं प्रकाशित है। इस महा विस्तृत और महा आतङ्कजनक सफ़ेद मैदान की शोभा मैं नहीं बयान कर सकता। उससे अधिक सौन्दर्य्य-मय वस्तु मैंने संसार में दूसरी नहीं देखी। कुछ दूर पर बर्फ़ से ढके हुए ऊँचे ऊँचे पर्वत नज़र आते थे और आस्मान को फाड़ कर उसके भीतर घुस जाने की चेष्टा सी करते थे। पास ही वह ज्वालामुखी पर्वत अपने अग्निवर्षी मुँह से धुवाँ के प्रचण्ड पुञ्ज छोड़ रहा था। अहः, क्या ही हर्ष और विस्मय से भरा हुआ दृश्य था।

२२ अगस्त का सूर्य ने हम लोगों को अपने पुनर्दर्शन से फिर कृतार्थ किया। हम लोग तत्काल उसके दर्शन के लिए बाहर निकले। जिसने सूर्य के बहु-काल-व्यापी लोप का अनुभव नहीं किया वह कदापि नहीं जान सकता कि उसका पुनर्दर्शन कितना आनन्द दायक होता है। आकाश ने अजीब रङ्गत धारण की; उसने बलात् हम लोगों के हृदय का हरण कर लिया। जितने जीव और जितने पदार्थ थे

सब में नया उत्साह और नया जीवन सा आगया। जितने मेघ थे सबने इन्द्रधनुष की शोभा छीनी; नाना प्रकार के मनो-मुग्ध कारी रङ्गों से वे भर गये।

अब बे-पहिये की छोटी छोटी गाड़ियों को साथ लेकर बाहर निकलने का मौसम आया। सब तैयारियाँ शीघ्र ही हुई। कुत्ते, छोलदारियाँ, खाने पीने का सामान, कपड़े-लत्ते और सोने के लिए थैलियाँ तैयार हुई। हम लोग सफर के लिए निकल पड़े। जहाँ तक मुमकिन था हम ने कम असवाब साथ लिया। इस सफ़र में हमने एक बार भी कपड़े नहीं उतारे। हाँ, मोजे अलबत्ते हर रोज निकालने पड़ते थे; क्योंकि न निकालने, से पैर चिपक जाने का डर था। जब हम चले, हमारे सोने के थैलों का वजन ७ सेर था; परन्तु जब हम लौटे तब वह १५ सेर हो गया था। बर्फ ने उनके वजन को दूना कर दिया था। जब दो आदमी कोशिश करके खोलते थे तब रात को सोने के वक्त ये थैले खुलते थे। वे इतने ठंडे हो जाते थे कि उनमें और बर्फ में कोई अन्तर न रहता था। उसी के भीतर हम लोग किसी प्रकार बड़े कष्ट से रात बिताते थे। सुबह के वक्त हमारे पैर सुन्न हो जाते थे; बड़ी बड़ी मुश्किलों से वे मोजों और बूटों के भीतर जाते थे।

ऐसी मुसीबतें झेलते हुए हम लोग ३०० मील तक गये। यहाँ तक जाने में हमको ९४ दिन लगे। किसी

किसी दिन हम लोग १५ मील जाते थे। इस सफर में हमारे बहुत से कुत्ते मर गये। इसलिये हम लोगों को स्वयं गाड़ियाँ खींचनी पड़ीं। जब हम लोगों ने देखा कि हमारे कुत्ते मर रहे हैं तब हमने अपने खाने पीने का बहुत सा सामान एक जगह रख कर गाड़ियाँ हलकी कर लीं। तेल भी कम कर दिया गया। इसलिए एक ही दो बार चूल्हा जलने लगा। इसका फल यह हुआ कि हम लोगों को गरम खाना कम नसीब होने लगा। जरा सी शक्कर, सील के मांस का एक छोटा सा सूखा टुकड़ा और डेढ़ बिस्कुट पर हम लोग बसर करने लगे। ये चीजें हम रास्ते में चलते चलते खाते थे; कुत्तों की बुरी हालत थी। जब हम लोग खाते थे तब वे हमारे मुँह की तरफ देखा करते थे कि अगर कोई टुकड़ा नीचे गिरे तो वे उसे उठा लें मगर यह उदारता दिखलाना हम लोगों के लिए स्वयं अपनी मृत्यु को बुलाना था। जब शाम को हम लोग कहीं ठहरते तब हम एक कुत्ते को प्रायः गोली मार देते। उसी के मांस से दूसरे कुत्तों का गुजर होता। प्रतिदिन हमारी खूराक कम होने लगी; भूख से हम लोग विकल होने लगे; यहाँ तक कि बिस्कुट और हलुवा हम लोगों को स्वप्न में भी देख पड़ने लगा। दिन रात खाने ही की चीजों का ध्यान रहता था। एक प्रकार की निराशा ने सबके चेहरों का रङ्ग फीका कर दिया। नवम्बर भर हम लोग इसी तरह सख्त मुसीबतों में मुब्तिला

रह कर भी बराबर चले गये। दिसम्बर में भी यही हालत रही। अन्त को ३१ दिसम्बर के दिन हम लोग अपने सफ़र की अन्तिम सीमा पर पहुँचे; वहाँ से आगे हम न बढ़ सके। यहीं हमने अँगरेज़ी झण्डा खड़ा कर दिया।

खाने का सामान बहुत कम रह गया था। कुत्ते प्रायः सभी मर चुके थे। अतएव हम लोगों ने वापस जाने का विचार किया। यहाँ से हमारा जहाज ३०० मील दूर था। सब लोग निहायत कमजोर हो गये थे। खैर किसी तरह हम लोग पीछे लौटे। हममें से किसी किसी को बर्फ़ ने कुछ काल के लिए अन्धा तक कर दिया। कलेजे को कड़ा करके हम सबने जहाज की तरफ पैर फेरा। धीरे धीरे सब कुत्ते मर गये; सिर्फ़ दो बचे। अतएव हम लोगों को खुद गाड़ियाँ खींचना पड़ी। कभी कभी तीन तीन मन तक वजन गाड़ियों में भर कर हमने खींचा। ओह, उस मुसीबत का स्मरण आते ही बदन काँपने लगता है। वर्णनातीत दुःख सह कर ३ फरवरी १९०४ को हम लोग अपने जहाज पर वापस आये। वहाँ हमने देखा कि हमारी मदद के लिए एक दूसरा जहाज आ गया है। उसमें हम लोगों की खानगी चिट्ठियाँ और अखबार वगैरह मिले। तब हमने जाना कि बोर युद्ध की समाप्ति हो गई और हमारे बादशाह सातवें एडवर्ड की राजगद्दी का जलसा भी हो चुका।

हमारा "डिस्कवरी" नामक जहाज १९०२ के आरम्भ से बर्फ के भीतर पड़ा है। आशा है वह शीघ्र ही वापस आवे और अपने काम की सफलता से भेजने वालों ही के नहीं, किन्तु सारे संसार के आनन्द और ज्ञान की वृद्धि करने का साधक होगा।

[सितम्बर १९०४

दक्षिणी ध्रुव की यात्रा ।

(१)

पिछले सौ वर्षों में योरुप और अमेरिका के सैकड़ों साहसी मनुष्यों ने उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव की यात्रायें की हैं। उनमें से कितने ही लोग इन दुर्गम और भयङ्कर स्थानों में बहुत दूर तक गये हैं। वहाँ के अद्भुत दृश्यों का हाल भी उन्होंने लिखा है। कुछ दिन हुए लेफ्टिनेण्ट शैकलटन अपने साथियों समेत दक्षिणी ध्रुव की दूसरी यात्रा करने गये थे। आप वहाँ से लौट आये हैं। आपकी पहली यात्रा का वृत्तान्त पिछले लेख में दिया जा चुका है। दूसरी यात्रा के सम्बन्ध उन्होंने जो कुछ अभी हाल ही में प्रकाशित किया है, उसका भी आशय नीचे दिया जाता है।

शैकल्टन साहब अपने साथियों समेत २९ अक्टूबर १९०७ को दक्षिणी ध्रुव की यात्रा के लिए न्यूज़ीलेंड से रवाना हुए थे। वे अपने साथ कुत्तों की जगह मन्चूरिया के टट्टू और मोटर ले गये थे। कालू खा जाने के कारण यद्यपि कुछ टट्टू मर गये और कुछ मार डाले गये तथापि कुत्तों की अपेक्षा वे अधिक लाभदायक सिद्ध हुए। शैकल्टन साहब कोई चौदह महीने तक इधर उधर घूमते और तरह तरह की चीज़ें खोजते रहे। अन्त में वे एक ऐसे स्थान पर पहुँचे जहाँ से ठेठ दक्षिणी ध्रुव १११ मील था। ध्रुव के इतने निकट अब तक कोई न पहुँचा था। आपही पहले मनुष्य हैं जो वहाँ तक पहुँचे। आपके पहले, १९०२ में, जो मनुष्य दक्षिणी ध्रुव की ओर सबसे अधिक दूर तक गया था वह कप्तान स्काट था। परन्तु वह जिस स्थान तक पहुँचा था वह ठेट दक्षिणी ध्रुव से ४६१ मील की दूरी पर था। इससे आप समझ सकते हैं कि शैकल्टन साहब कप्तान स्काट से कोई ३५० मील आगे तक पहुँच गये। वहाँ पहुँच कर आपने अँगरेज़ों का जातीय झण्डा (Union Jack) फहराया। यह चिरस्मरणीय घटना ९ जनवरी १९०९ ईसवी की है। आगे ऐसा दुर्गम मार्ग था कि और दूर बढ़ना आपने असम्भव समझा। इसलिए वहाँ से आप लौट पड़े और न्यूज़ीलैंड होते हुए इंग्लैंड को रवाना हुए।

शेकल्टन साहब ने अपना एक दूसरा दल दाक्षिणात्य चुम्बक ध्रुव (Sauth Magnetic pole) की खोज के लिए दूसरी तरफ भेजा था। कहते हैं कि वह स्थान दक्षिणी ध्रुव से भी अधिक दुर्गम, निर्जन और भयङ्कर है। वहाँ तक पहुँचना बहुत बड़े साहस का काम था। तिस पर भी इस दल को कामयाबी हुई। इस दल के लोग १६ जनवरी १९०९ को उस चुम्बकीय ध्रुव के पास पहुँच गये और वहाँ अपने देश का दिग्विजयी झंडा गाड़ दिया। इस स्थान पर भी इन लोगों के पहले कोई मनुष्य न पहुँचा था।

शैकल्टन साहब और उनके साथियों ने दक्षिणी ध्रुव की इस चढ़ाई में कौन कौन सी बातें जानी—अथवा यों कहिए कि कौन कोन से अद्भुत और साहसिक काम किये तथा किन किन बातों की खोज की—इसका विवरण इस प्रकार है।

(१) ये लोग ऐसे स्थान पर पहुँच गये जहाँ से दक्षिणी ध्रुव केवल १११ मील की दूरी पर था।

(२) दक्षिणात्य-चुम्बक ध्रुव तक भी पहुँचे।

(३) आठ पर्वत श्रेणियों को खोज निकाला।

(४) कोई एक सौ पर्वतों की पैमाइश की।

(५) एरीबस नाम के ज्वालामुखी पर्वत पर चढ़े। यह पर्वत १३,१२० फुट ऊँचा है।

(६) विक्टोरियालैंड नामक टापू के पश्चिमी ओर के ऊँचे ऊँचे पर्वतों का ज्ञान प्राप्त किया।

(७) कोयले की खानों के निशान पाये।

(८) दक्षिणी ध्रुव के चारों ओर का वायुमण्डल शान्त है, इस कल्पित मत की असारता प्रत्यक्ष अनुभव की।

५ मार्च सन १९०८ को शैकलटन साहब ने एरीबस पहाड़ पर चढ़ना प्रारम्भ किया। साथ में सात आदमी और थे। सब लोग अपना अपना असबाब अपनी पीठ पर लादे हुए थे। ७ मार्च की रात को वे लोग ९५०० फुट की ऊँचाई पर पहुँचे। वहाँ पर इतनी सख्त सर्दी पड़ रही थी कि थर्मामीटर का पारा शून्य से पचास डिग्री नीचे पहुँच गया था। इसी समय एक बड़ा भयङ्कर तूफान आया वह कोई तीस घण्टे तक बराबर बना रहा। इसलिए दूसरे दिन वे लोग वहीं रहे। ९ मार्च को उन्होंने फिर चढ़ना प्रारम्भ किया। ११,००० फुट की उँचाई पर पहुँचने के बाद उन्हें इस ज्वालामुखी पर्वत का एक दहाना देख पड़ा जिसमें से आग की लपटें सदा निकला करती हैं। पर खूबी यह कि उसमें धुआँ का नामोनिशान तक न था। जब वे लोग चोटी पर पहुँचे तब उन्होंने देखा कि वहाँ पूर्वोक्त दहाने की अपेक्षा एक बहुत बड़ा दहाना मौजूद है। उसका घेरा आध मील से अधिक होगा। गहराई अस्सी फुट के क़रीब मालूम

होती थी। यह भाफ और गन्धक की गैस को इतनी तेजी से उगल रहा था कि उसकी लपटें बीस हजार फुट की ऊँचाई तक जाती थीं। इस स्थान के कई फोटो लिये गये और बहुत से भूगर्भ विद्या-सम्बन्धी पदार्थ भी इकट्ठे किये गये। इसके बाद वे लोग वहाँ से लौट पड़े और दूसरे दिन, ११ मार्च को अपने नियत स्थान पर पहुँचे। कोई तीन महीने तक इस पहाड़ के चारों ओर शान्ति रही। एकाएक १४ जून १९०८ की रात को वह फट पड़ा। पर्वत के चारों ओर की भूमि अग्निमय हो गई। यह घटना शुक्ल पक्ष की है। चाँदनी रात में बर्फीले पहाड़ पर धधकती हुई अग्नि का कलोल करना, भयानक होने पर भी, कैसा सुन्दर दृश्य था, इसको वही समझ सकते हैं जिन्होंने उसे देखा है। शेकलटन साहब के साथियों ने इस मनो मुग्धकारी दृश्य के कई फोटोग्राफ लिये।

शेकलटन साहब के साथ कोई आठ दस विज्ञान वेत्ता भी गये थे। उनमें से हर मनुष्य विज्ञान की एक न एक शाखा का पण्डित है। उन लोगों ने अपना अपना काम बड़ी खूबी से पूरा किया। किसी ने ज्योतिष्क तारकाओं की जाँच की; किसी ने वायुमण्डल की परीक्षा की; किसी ने जल की, किसी ने जल-जन्तुओं की, किसी ने वनस्पतियों की। फोटोग्राफरों ने फोटो लिये। पैमायश करने वालों ने पैमायश की और संग्रह करने वालों ने नाना प्रकार की

वस्तुओं का संग्रह किया। इन साहसी विज्ञानवेत्ताओं ने वहाँ ऐसी कितनी ही चीजों का पता लगाया जिनकी सहायता से जड़ और जीव-विज्ञान की बहुत कुछ उन्नति हो सकती है।

[जून १९०९

पृथ्वी के उत्तरी और दक्षिणी भागों को क्रम से उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव कहते हैं। ये देश बर्फ से सदा ढके रहते हैं। वहाँ बारहों मास अत्यन्त शीत रहता है। अतएव वहाँ मनुष्य का निवास प्रायः असम्भव है। सभ्य देशों के निवासी इन दुर्गम देशों का हाल जानने के लिए सदा से उत्सुकता प्रकट करते रहे हैं। केवल यही नहीं, उनमें से कितने ही साहसी पुरुष इन देशों का पूरा हाल जानने के लिए, समय समय पर, वहाँ गये भी हैं। परन्तु सन् १९११ ईसवी के पहले ठेठ ध्रुवों तक कोई भी नहीं पहुँच पाया। हाँ, उस साल और उसके बाद दो आदमी तो खास उत्तरी ध्रुव तक और दो आदमी ठेठ दक्षिणी ध्रुव तक पहुँच गये। उनके नाम क्रम से ये हैं—पियरी, कुक, एमंडसन और स्काट। इनमें से पहले और तीसरे साहब के विषय में तो लोग निश्चय रूप से कहते हैं कि वे क्रम से उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव को अवश्य पहुँचे; पर दूसरे और चौथे महाशय के विषय में किसी किसी को सन्देह है। पर जो लोग इस विषय में विशेष अनुभव रखते हैं उनका कहना है कि चारों महाशय ध्रुवों तक पहुँच गये थे। इनमें से अन्तिम साहब, कप्तान स्काट, के विषय में हाल ही में ख़बर मिली है कि कई साथियों समेत उनका

दक्षिण के ध्रुव या देश में देहान्त हो गया। इस दुःखदायी समाचार ने सारे सभ्य संसार—विशेष कर इंगलैंड में हाहाकार मचा दिया। विलायत के प्रायः सभी प्रसिद्ध पुरुषों और बड़ी बड़ी सभाओं ने—यहाँ तक कि स्वयं सम्राट जार्ज और पार्ल्यामेंट ने भी कप्तान स्काट और उनके साथियों की अकाल-मृत्यु पर शोक प्रकट किया और उनके परिवार वालों के साथ सहानुभूति दिखाई। कितने ही लोग इन पर लोकगत वीरों का स्मारक चिन्ह स्थापित करने तथा उनके आश्रितों की सहायता करने के लिए धड़ाधड़ चन्दा एकत्र कर रहे हैं। ऐसे समय में कप्तान स्काट और उनकी ध्रुवीय यात्रा का हाल जानने के लिए पाठक अवश्य उत्सुक होंगे। अतएव इस विषय में कुछ लिखना हम यहाँ उचित समझते हैं।

कप्तान स्काट के पहले जिन जिन लोगों ने जब जब दक्षिणी ध्रुव की यात्रा की उसका विवरण इस प्रकार है—

नाम यात्री।	कब यात्रा की।	कहाँ तक पहुँचे क्या खोजा।
कुक	१७७२ ई०	बर्फ के पहाड़
कप्तान वुक	१७७३	७१ डिग्री १० मिनट
वेडेल	१८२३	७४ डिग्री
सरजेम्स रास	१८३९	साउथ विक्टोरियालैंड, ऐरेबस तथा टेरर पहाड़
सरजेम्स रास	१८४१	हिम भूमि

कमाण्डर जरलैच	१९०१	७०½ डिग्री
कमाण्डर स्काट	१९०१	८२ डिग्री १७ मिनट एड-वर्डलैंड, मार्खम तथा लांग स्टाफ पर्वत
गास	१९०१	कुछ वैज्ञानिक तत्त्व
डाक्टर ब्रूस	१९०१	,, ,,
डाक्टर चारकोट	१९०४	ग्रेहमलैंड
डाक्टर चारकोट	१९०८	७० डिग्री ३० मि०
सर अर्नेस्ट शैकलटन	१९०८	८८ डिग्री २३ मिनट एक ज्वालामुखी पर्वत तथा मैगनेटिक पोल
कप्तान एमंडसन	१९१०	ठेठ ध्रुव तक माड पर्वत

अब कप्तान स्काट की बारी आई। ऊपर की सूची से मालूम होगा कि स्काट साहब एक बार पहले भी दक्षिणी ध्रुव की यात्रा कर आये थे। उस समय वे कमाण्डर स्काट के नाम से प्रसिद्ध थे। उनकी दूसरी या अन्तिम यात्रा सन् १९१० ईस्वी में प्रारम्भ हुई। यह यात्रा टेरानोआ नामक जहाज पर हुई थी। यह जहाज अँगरेजों ही का बनाया तथा अँगरेजों ही की सम्पत्ति थी। इसके यात्री भी अँगरेज ही थे। इसीलिए इस ध्रुवीय यात्रा को अँगरेज लोग (British National Expedition) अर्थात् अँगरेजों की जातीय चढ़ाई कहते हैं।

इस यात्रा में कप्तान स्काट ठेठ ध्रुव तक पहुँचना चाहते थे। अतएव इसके लिए उन्होंने जैसी चाहिए वैसी ही तैयारी भी की थी। उन्हें दक्षिण के ध्रुवीय प्रदेशों का अनुभव भी था। क्योंकि वे खुद एक बार वहाँ हो आये थे। इसके सिवा शैकल्टन साहब ने भी अपने अनुभवों के द्वारा कप्तान स्काट को इस यात्रा की तैयारी में सहायता पहुँचाई। अब इस यात्रा के लिये धन का प्रश्न सामने आया। परन्तु यह कमी भी कुछ तो सर्व-साधारण के चन्दे से पूरी हो गई और कुछ कप्तान स्काट ने अपनी सम्पत्ति गिरवी रख कर पूरी करली।

इस प्रकार सज बज कर कप्तान स्काट यात्रा के लिए तैयार हो गये। इस यात्रा में उनके मुख्य मुख्य साथी ये थे—(१) लेफ्टिनंट एवेन्स, एटोरानोवा जहाज के सहकारी नायक। (२) डाक्टर विलसन, इस यात्रा में जाने वाले वैज्ञानिकों के मुखिया, (३) मिस्टर मेकिंटासवेल, न्यूजीलैंड के भू गर्भ-विभाग के डाइरेक्टर।

कप्तान स्काट का टेरानोवा जहाज़ २९ नवम्बर, सन् १९१० ईसवी, को न्यूज़ीलैंड से रवाना हुआ। ३० दिसम्बर को वह फ्रोज़र अन्तरीप के निकट पहुँचा। परन्तु वहाँ उतरने का सुभीता न देखकर वह मेकमर्डोसौंड नामक स्थान की ओर गया। वहाँ जहाज से उतर कर सब लोगों ने एवेंस अन्तरीप में जाड़ा बिताया। जनवरी सन् १९११

के अन्त में कुछ साथियों समेत कप्तान स्काट ने दक्षिण की यात्रा की तैयारी के लिए खाने-पीने का सामान इकट्ठा करना प्रारम्भ किया।

इस स्थान पर कोई नो महीने ठहरने के बाद ये लोग २ नवम्बर १९११ ईसवी को दक्षिण की ओर रवाना हुए। रास्ते में बर्फ के टीलों, गढ़ों और ऊँचे नीचे दुर्गम स्थानों को पार करते हुए, साथियों समेत, कप्तान स्काट पन्द्रह मील प्रति दिन की चाल से आगे बढ़ने लगे। मार्ग में बर्फ के ख़ास तरह के तूदे बनाते जाते थे, ताकि लौटते वक्त राह न भूल जायँ। ४ जनवरी सन् १९१२ को यह दल ८७ डिग्री ३६ मिनट दक्षिणी अक्षांश पर पहुँचा। वहाँ से दक्षिणी ध्रुव केवल डेढ़ सौ मील के फासले पर था और उन लोगों के पास तीस दिन के लिए खाने का सामान था। कहते हैं कि इस जगह से स्काट साहब ने अपने कुछ साथियों को लौटा दिया और कहा कि तुम लोग जा कर जहाज़ का प्रबन्ध करो। ये लोग रास्ते में ध्रुवीय प्रदेश के जीव-जन्तुओं तथा जल वायु की परीक्षा करने और कितने ही आविष्कार करते हुए अपने ठहरने के स्थान पर लौट आये। कप्तान स्काट अपने चार साथियों के साथ आगे बढ़े और शायद ध्रुव तक पहुँच गये। लौटते वक्त रास्ते में पाँचों वीर-पुङ्गवों का प्राणान्त हो गया। अभी तक यह पता नहीं लगा कि किन कारणों से उनकी मृत्यु हुई।

हाँ, ५ मार्च १९१२ तक, सभ्य संसार को उनके समाचार मिलते रहे; उसके बाद नहीं। कोई दस महीने तक टेरानोवा वाले, कप्तान स्काट के साथी, केवल उनके लौटने की प्रतीक्षा ही नहीं करते रहे, किन्तु उनका पता भी लगाते रहे। जब उन्हे यह निश्चय हो गया कि वीरवर कप्तान स्काट और उनके साथी अकाल-काल-कवलित हो गये तब वे लोग इंग्लैंड को लौटे और वहाँ पहुँच कर उन्होंने संसार को यह महा-दुःख-दायी समाचार सुनाया।

उत्तरी ध्रुव की यात्रा में तो ऐसी दुर्घटनायें कई बार हो चुकी हैं, पर दक्षिणी ध्रुव की यात्रा में इसके पहले कभी कोई बड़ी दुर्घटना नहीं हुई थी।

जो वीर अँगरेज इस भयङ्कर दुर्घटना के शिकार हुए हैं उनका परिचय दे देना हम यहाँ पर उचित समझते हैं। सबसे पहले कप्तान स्काट का हाल सुनिए।

स्काट साहब का पदवियों समेत पूरा नाम था—कप्तान राबर्ट फैलकन स्काट, आर० एन० सी० वी० ओ०, एफ० आर० जी० एस०। आपका जन्म ६ जून सन् १८६८ ईसवी को विलायत के डेवन पोर्ट औटलैंड स्थान में हुआ था। आप ने बाल्यावस्था में साधारण स्कूली शिक्षा प्राप्त की। इसके बाद सन् १८८२ ईसवी में आप इँग्लैंड के नौ-सेना-विभाग में भर्ती हुए। बहुत दिनों तक मामूली जहाजी काम करने के बाद आप सन् १८९८ ईसवी में, इस विभाग के लेफ्टि-

नेण्ट बनाये गये। एक ही दो वर्ष बाद आपको कमाण्डर का पद मिला। सन् १९०४ में कप्तान के उच्च पद पर आप नियत किये गये। १९०५ ईसवी में कैम्ब्रिज और मैंचेस्टर के विश्वविद्यालयों ने आपको विज्ञानाचार्य, अर्थात् डी० एस० सी० की प्रतिष्ठित पदवी से विभूषित किया। सन् १९०८ में आपने विवाह किया। सन १९०१ ईसवी में कप्तान स्काट ने पहली बार दक्षिणी ध्रुव की यात्रा की। उस समय आप ध्रुवीय प्रदेश में जितनी दूर तक गये थे उसके पहले उतनी दूर तक कोई न पहुँच पाया था। अतएव तब से आपका नाम सारे संसार में प्रसिद्ध हो गया और आप अच्छे ध्रुवीय यात्री माने जाने लगे। इस उपलक्ष्य में उस समय आपको दुनिया भर की मुख्य मुख्य भौगोलिक सभाओं ने स्वर्णपदक दिये थे। स्काट साहब बड़े ही साहसी, दृढ़ प्रतिज्ञ और वीर पुरुष थे। प्रबन्ध करने की शक्ति उनकी बहुत बढ़ी चढ़ी थी। विज्ञान की प्रायः सभी शाखाओं में वे थोड़ा बहुत दखल रखते थे।

कप्तान स्काट के साथ जिन चार वीरों ने ध्रुवीय प्रदेश में अपनी मानवलीला समाप्त की उनके नाम ये हैं—डाक्टर विलसन, कप्तान ओट्स, लेफ्टिनेण्ट ओवर्स, पेटी अफसर एवेंस। इन में डाक्टर विलसन इँगलैंड के प्रसिद्ध विज्ञान-वेत्ता थे। वे कप्तान स्काट के पुराने मित्रों में से थे। कप्तान ओट्स एक सुयोग्य अफसर थे। वे बड़े ही मुस्तैद थे।

स्काट साहब उन पर बहुत विश्वास करते थे। लेफ्टिनेण्ट ओवर्स को तो कप्तान स्काट का दाहिना हाथ कहना चाहिए। कार्य-दक्षता के कारण अपने साथियों के वे बड़े ही प्रिय पात्र बन गये थे। यह बात यहाँ पर विशेष रूप से उल्लेख योग्य है कि ये दोनों अफसर भारतीय सेना विभाग से सम्बन्ध रखते थे और इसी देश से जाकर इस विकट यात्रा में सम्मिलित हुए थे। एवेंस साहब भी कप्तान स्काट के विश्वासपात्र और साहसी सहायकों में थे।

विलायत वाले स्काट साहब और उनके साथियों का स्मारक बनाना चाहते हैं। लार्ड कर्जन इस काम के लिए जी तोड़ कर परिश्रम कर रहे हैं। इस चढ़ाई में कोई साढ़े चार लाख रुपया खर्च पड़ा है। वह सब चन्दे से भुगताया जायगा, जो लोग इस यात्रा में मरे हैं, उनके कुटुम्बियों को पेंशन भी दी जायगी। कर्म्मवीरों का आदर करना कर्म्मवीर ही जानते हैं।

[मार्च १९१३

उत्तरी ध्रुव की यात्रा।

(१)

पाठक जानते ही हैं कि पृथ्वी गोल है। पृथ्वी के गोले की एक तरफ योरुप, एशिया और अफ्रीका की पुरानी दुनिया और दूसरी तरफ अमेरिका की नई दुनिया है। दोनों गोलार्द्धों का ठीक ऊपरी सिरा उत्तरी ध्रुव कहलाता है अर्थात् उसकी स्थिति ठीक ९० अंश पर है। वहाँ हमेशा बर्फ जमा रहता है। बर्फ के भयङ्कर तूफान आया करते हैं, समुद्र जम कर बर्फ की चटान की शकल का हो जाता है। अतएव मनुष्य के लिए ध्रुव प्रदेश प्रायः अगम्य है। परन्तु महा अध्यवसायशील योरुप और अमेरिका वाले अगम्य को गम्य, अज्ञेय को ज्ञेय और अदृश्य को दृश्य करने के लिए भी यत्न करते हैं। १८२७ ई० से लेकर आज तक कितने ही उद्योगी आदमियों ने उत्तरी ध्रुव तक पहुँचने, वहाँ की सैर करने, वहाँ की स्थिति प्रत्यक्ष देखने का यत्न किया है। उन्हें इस काम में बहुत कुछ

कामयाबी भी हुई है। उत्तरी और दक्षिणी ध्रुव की स्थिति प्रायः एक सी अनुमान की जाती है। अब तक लोगों का ध्यान विशेष करके उत्तरी ध्रुव तक पहुँचने ही की तरफ था; पर कुछ समय से दक्षिणी ध्रुव पर भी चढ़ाइयाँ शुरू हुई हैं। उनमें से कुछ का संक्षिप्त वृत्तान्त इसके पहले के लेखों में दिया जा चुका है। इस लेख में दक्षिणी ध्रुव के विषय में नहीं, किन्तु उत्तरी ध्रुव पर की गई एक नवीन चढ़ाई का कुछ हाल पाठकों को सुनाना है। १८९६ ईसवी में डाक्टर नानसेन ने उत्तरी ध्रुव पर चढ़ाई करके बहुत नाम पाया। वे ८६ अक्षांश तक पहुँच गये थे। उत्तरी ध्रुव पर चढ़ाइयाँ तो कई हुई हैं; पर उनमें से ९ मुख्य हैं। इन चढ़ाइयों के नायकों के नाम, चढ़ाई का साल और उसकी अन्तिम सीमा के अक्षांश हम नीचे देते हैं:—

नाम	सन्	अक्षांश
डब्लू० ई० पारी	१८२७	८२-४५
सी० एफ० हाल	१८७०	८२-११
जूलियस पेयर	१८७४	८२-५
सी० एस० नेयर्स	१८७६	८३-२०
ए० डब्लू० ग्रीली	१८८२	८३-२४
वाल्टर वेल मैन	१८८९	८२-
एफ नानसेन	१८९६	८६-१४

ड्यूक आफ अबरूजी	१९००	८६-३४
राबर्ट ई० पीरी	१९०२	८४-१७

इससे पाठकों को मालूम हो जायगा कि नानसेन ८६ अंश १४ मिनट तक ही जा सके थे; पर ड्यूक आफ अबरूजी, उनके बाद उनसे भी दूर अर्थात् ८६ अंश ३४ मिनट तक पहुँचे थे। अब एक अमेरिकन साहब ने इन ड्यूक महाशय को भी मात दिया है। आप का नाम है कमांडर पीरी। उत्तरी ध्रुव पर चढ़ाई करने के लिए आप १६ जुलाई सन् १९०५ को उत्तरी अमेरिका के न्यूयार्क शहर से रवाना हुए थे। कोई डेढ़ वर्ष बाद आपकी चढ़ाई का फल प्रकाशित हुआ है। उससे मालूम हुआ है कि आप ८७ अंश ६ मिनट तक गये। वहाँ से आगे नहीं जा सके। अर्थात् उत्तरी ध्रुव से कुछ कम ३ अंश इधर ही रह गये। यही बहुत समझा गया है। लोग धीरे धीरे आगे ही बढ़ रहे हैं। बहुत सम्भव है किसी दिन कोई ९० अंश तक पहुँच कर ध्रुव के दर्शनों से कृतकृत्य हो आवे। कमांडर पीरी ने उत्तरी ध्रुव के पास बर्फ से भरे हुए समुद्र में चलने लायक एक खास तरह का जहाज़ बनवाया। १६ जुलाई सन् १९०५ को वह जहाज़ न्यूयार्क से चला। उस पर सब मिला कर २० आदमी थे। वे सब कप्तान बार्टलेट की निगरानी में थे। पीरी साहब जहाज़ के साथ नहीं रवाना हुए। उत्तरी अमेरिका के ठेठ पूर्व, समुद्र से सटे

हुए, नोवा स्कोटिया के ब्रेटन नामक अन्तरीप में सिडनी नाम का एक बन्दरगाह है। वहीं जाकर कमांडर पीरी जहाज़ पर सवार हुए। वहाँ जहाज़ ने खूब कोयला लिया। खाने पीने का भी सामान यथेष्ट लादा। २६ जुलाई को जहाज़ ने सिडनी से लङ्गर उठाया। जहाज़ का नाम है "रूज़वेल्ट"। अमेरिका की संयुक्त रियासतों के सभापति रूज़वेल्ट के नामानुसार इसका नाम रक्खा गया है। २९ जुलाई को यह जहाज़ "डोमिनोरन" नामक बन्दरगाह में पहुँचा। वह जगह लबराडोर नाम के टापू में है। वही उत्तरी अमेरिका के पूर्व है और अङ्गरेज़ों के न्यूफौंड लैंड टापू के अन्तर्गत है। वहाँ से वह ग्रीन लैंड की तरफ उत्तर को रवाना हुआ। ७ अगस्त को वह ग्रीनलैंड के यार्क नामक अन्तरीप में पहुँचा और १६ को एटा नामक बन्दरगाह में। इस जहाज के साथ उसका एक मददगार भी था। उसका नाम है "यरिक"। यह जहाज़ ग्रीनलैंड के कितने ही स्थानों में, वहाँ के निवासियों तथा कुत्तों को लेने के लिए घूमता फिरा। जब यह काम हो चुका तब १३ अगस्त को उसने लाये हुए कुत्तों और आदमियों को "रूज़वेल्ट" के हवाले किया। एटे में "रूज़वेल्ट" कई दिन तक ठहरा। अपने प्रत्येक पुर्जे की परीक्षा करके उन्हें खूब साफ किया। जहाँ तक कोयला लाद सका "यरिक" से लिया। क्योंकि अब आगे और कोयला मिलने की आशा न थी। २००

कुत्ते और यस्किमो नामक जाति के २३ आदमी भी "यरिक" से उतने लिये। यस्किमो जाति के लोग ठंडिस्तानी देशों और टापुओं में रहते हैं। बर्फ में रहने का उन्हें जन्म ही से अभ्यास रहता है। वे उत्तरी ध्रुव के आस पास के प्रदेश से खूब परिचित होते हैं। इसीलिये कमांडर पीरी ने उनको अपने साथ ले जाने की ज़रूरत समझी।

बर्फ में डूबे हुए उत्तर ध्रुव के पास वाले प्रदेश में, गत वर्ष, पीरी साहब ने जो अनुभव प्राप्त किया, और जो कुछ उन पर बीती, उसका संक्षिप्त वृत्तान्त उन्होंने २ नवम्बर १९०६ को लिख कर रवाना किया है। लबराडोर के होपडेल नामक स्थान से उन्होंने यह वृत्तान्त न्यूयार्क को भेजा है। उसका मतलब हम थोड़े में उन्हीं की ज़बानी नीचे देते हैं:—

उत्तरी समुद्र के किनारे, ग्रांट राउ नामक भू प्रदेश के पास "रूज़वेल्ट" ठहरा। वहीं उसने जाड़ा बिताया। फ़रवरी में हम लोग बर्फ पर चलने वाली स्लेज नामक छोटी छोटी गाड़ियाँ लेकर उत्तर की ओर रवाना हुए। हेकला और कोलम्बिया के रास्ते हम आगे बढ़े। ८४ और ८५ अक्षांशों के बीच हमें खुला हुआ समुद्र मिला। उस पर बर्फ जमा हुआ न था। तूफान ने जमे हुए बर्फ को तोड़ फोड़ डाला; हमारे खाने पीने की चीज़ों को बर्बाद कर दिया; हमारी टोली के जो लोग पीछे थे, उनका लगाव काट दिया। इस कारण आगे बढ़ने में बहुत देर

हुई। किसी तरह हम लोग ८७ अक्षांश ६ मिनट तक पहुँचे। आगे बढ़ना असम्भव हो गया। लाचार लौटे। लौटती वार ८ कुत्ते मार कर खाने पड़े। कुछ दिनों में फिर खुला हुआ समुद्र मिला। उसमें पानी भरा था। राम राम करके ग्रीनलैंड के उत्तरी किनारे पर पहुँचे। राह में अनेक आफतों का सामना करना पड़ा। बड़ी बड़ी मुसीबतें झेलने पर ग्रीनलैंड के सामुद्रिक किनारे के दर्शन हुए। वहाँ के कई बर्फिस्तानी बैल मार कर खाये। किसी तरह किनारे किनारे चल कर जहाज के पास पहुँचे। हमारी टोली के जिन लोगों का साथ छूट गया था, उनमें से कुछ को तूफान, ग्रीनलैंड के उत्तरी किनारे पर ले गया। कुछ आदमी एक तरफ गये, कुछ दूसरी तरफ। एक टोली को मैंने भूखों मरते पाया और उसके प्राण बचाये। एक हफ्ते "रूजवेल्ट" पर रह कर हम लोग कुछ तरो ताजा हुए। फिर "स्लेज" गाड़ियों पर सवार हुए और पश्चिम की तरफ चले। ग्रांटलैंड नामक भूभाग के सारे उत्तरी किनारे को देख डाला। इतनी दूर चले गये कि उस किनारे की दूसरी तरफ जा पहुँचे। घर लौटती वार बर्फ और तूफान का लगातार सामना करना पड़ा। "रूजवेल्ट" तूफानों से बड़ी बहादुरी से लड़ता आया। बर्फ से लड़ने में "रूजवेल्ट" बड़ा बहादुर है। इस चढ़ाई में न कोई आदमी मरा और न कोई बीमार ही हुआ।

यह पीरी साहब की संक्षिप्त चिट्ठी है। आप को आशा थी कि आप उत्तरी ध्रुव तक जरूर पहुँच जायँगे। पर नहीं पहुँच सके। बर्फ के तूफानों ने उन्हें ८७ अक्षांश से आगे नहीं बढ़ने दिया। तिस पर भी वे इतनी दूर तक गये जितनी दूर तक आज तक कोई नहीं गया था। पीरी साहब अमेरिका के रहने वाले हैं। अतएव उत्तरी ध्रुव की सैर करने वालों में, दूरी के हिसाब से, इस समय अमेरिका का नम्बर सब से ऊँचा है। पीरी साहब का इरादा था कि सबाइन अन्तरीप से ३५० मील उत्तर वे अपना खेमा रक्खेंगे। वहाँ से उत्तरी ध्रुव ५०० मील है। राह में बर्फ के मैदान का विकट बियाबान है। इसे कोई डेढ़ महीने में पार कर जाने की उन्हें उम्मेद थी। परन्तु तूफानों की प्रचण्डता ने उनकी आशा नहीं पूरी होने दी।

१८७६ ईसवी में नेयर नाम के जो साहब उत्तरी ध्रुव देखने के इरादे से ८३ अक्षांश तक गये थे, उन्होंने लौट कर बतलाया था। कि ग्रांटलैंड नामक भूभाग के उत्तर, ३० मील की लम्बाई-चौड़ाई में, समुद्र बिलकुल बर्फ से जमा हुआ है। आपने राय दी थी कि यह बर्फ ५० फुट तक गहरा था। तब से लोगों ने यह अनुमान किया था कि इस तरह का समुद्र बहुत करके ध्रुव के पास तक गया होगा और वह बहुत गहरा न होगा। उस पर बर्फ की बहुत मोटी तह ठेठ नीचे तक गई होगी। लोगों

ने समझा था कि यह बर्फ हजारों वर्ष का पुराना होगा और पत्थर की तरह अपनी जगह पर जम गया होगा। अतएव इन चटानों पर "स्लेज" गाड़ियाँ आसानी से चल सकेंगी। परन्तु कमान्डर पीरी ने इस अनुमान को गलत साबित कर दिया। पीरी ने यथा सम्भव "स्लेज" गाड़ियों से भी काम लिया और जहाज से भी। यदि बर्फ समुद्र के तल तक पत्थर की तरह जमा होता तो वह तूफानों से न टूटता और पीरी की इच्छा के विरुद्ध उनके जहाज को ग्रीनलैंड की तरफ, दक्षिण पूर्व की ओर, न बहा ले जाता। पीरी ने समुद्र में बर्फ जमा जरूर पाया; पर वह पुराना न था। इसी से तूफान के वेग से वह टूट गया, पानी के ऊपर बहने लगा, और अपने साथ "रूज़वेल्ट" को भी ग्रीनलैंड की तरफ बहा ले गया। अतएव "स्लेज" गाड़ियों पर सवार हो कर ध्रुव तक पहुँचने की आशा व्यर्थ है।

अनेक विघ्न बाधाओं को टालकर, और "स्लेज" गाड़ियों पर दूर तक जाने में असमर्थ हो कर भी, पीरी साहब ८७ अक्षांश से भी कुछ दूर आगे बढ़ सके, यही ग़नीमत समझना चाहिए। आप की यात्रा का सविस्तार वृत्तान्त प्रकाशित होने पर कितनी ही अद्भुत अद्भुत बातों के मालूम होने की आशा है। [फरवरी १९०७

२

डाक्टर कुक और कमांडर पीरी में तुमुल वाग्युद्ध हो रहा है। एक दूसरे को अपदस्थ करने की कोशिश में अपनी पूरी पूरी शक्ति खर्च कर रहा है। तुम झूठे हो, तुम उत्तरी ध्रुव तक हरगिज नहीं गये—इस प्रकार परस्पर एक दूसरे पर अभिशाप लगा रहा है। योरप और अमेरिका में दो पक्ष हो गये हैं। एक पीरी का पृष्टपोषक बना है, दूसरा कुक का। ये दोनों ही महात्मा अमेरिका के रहने वाले हैं। इस कारण अमेरिका में इनके झगड़े की मात्रा बेहद बढ़ रही है। अखबारों में भी दो पक्ष हो गये हैं। एक पीरी की प्रशंसा के गीत गा रहा है, दूसरा कुक के। अमेरिका के प्रसिद्ध नगर न्यूयार्क के अधिकारियों ने कुक के दावे को सच समझ कर उनका बढ़िया सत्कार किया है। उधर अमेरिका की संयुक्त रियासतों के भूतपूर्व प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट ने कमांडर पीरी ही से हाथ मिला कर उन्हें उत्तरी ध्रुव की चढ़ाई पर भेजा था। कमांडर पीरी अमेरिका की फौज में अफसरी कर चुके हैं। उन्होंने प्रेसिडेन्ट रूजवेल्ट ही के नामानुसार अपने जहाज का नाम 'रूजवेल्ट' रक्खा था। इसी जहाज पर वे पहले और इस दफे भी उत्तरी ध्रुव की यात्रा करने गये थे। अतएव पीरी की कामयाबी पर रूजवेल्ट साहब को जरूर ही प्रसन्नता हुई होगी ! न्यूयार्क की प्रधान भौगो-

लिक सभा ने भी पीरी के कागजात की जाँच करके उन्हें यथार्थ माना है।

पीरी के पक्षपाती कुक की बेतरह खबर ले रहे हैं। उत्तरी अमेरिका में अलास्का एक जगह है। उसमें मेकक्निले नाम का एक पर्वत है। उसके सर्वोच्च शिखर पर चढ़ जाना दुःसाध्य समझा गया था। कई वर्ष हुए डाक्टर कुक उस पर्वत पर चढ़े थे। बाद में उन्होंने प्रकाशित किया था कि मैं उसकी चोटी तक हो आया। अपने चढ़ने उतरने का वृत्तान्त भी उन्होंने प्रकाशित किया था। जो मनुष्य उस चढ़ाई में उनके साथ था उसने अब, इतने दिनों बाद, हल्ला मचाया है कि डाक्टर कुक उस पहाड़ की चोटी तक गये ही नहीं। बीच ही से वे उतर आये थे और झूठ ही प्रकाशित कर दिया था कि मैं ऊपर तक हो आया। एक और तुर्रा सुनिए। डाक्टर कुक कहते हैं कि उत्तरी ध्रुव की चढ़ाई के विषय के कागजात मैं अमुक टापू के अमुक नगर में अमुक मनुष्य के पास रख आया हूँ। उनके आने पर मैं अपनी यात्रा का वैज्ञानिक वर्णन प्रकाशित करूँगा। इस "अमुक" मनुष्य को लोगों ने ढूँढ़ निकाला और कुक के कागजात की बात उससे पूँछी। वह कहता है कि मेरे पास कुक के कागजात का एक चिट भी नहीं। हाँ, दो एक बकस कुक जरूर मेरे पास रख आये हैं। उनमें चाहे जो भरा हो, मैं नहीं जानता; वे सब बन्द हैं।

इस प्रकार पीरी के पक्षपाती डाक्टर कुक के पीछे पड़ गये हैं। वे उन्हें हर तरह झूठा साबित करने की चेष्टा कर रहे हैं। वे कहते हैं कि डाक्टर कुक के जी में यदि चालाकी न होती तो वे ध्रुव की यात्रा में अपने साथ किसी सभ्य आदमी को जरूर ले जाते। जंगली यस्किमो लोगों ही को वे अपना मददगार न बनाते। खैर, जिन दो जङ्गली आदमियों को वे कहते हैं कि मेरे साथ थे उन्हीं को हाजिर करें। क्यों वे उन्हें वहीं छोड़ आये? बिना बरसों पहले से तैयारी किये, मछली मारने की एक साधारण सी नौका पर सवार हो कर, कोई उत्तरी समुद्र की यात्रा नहीं कर सकता।

अमेरिका के न्यूयार्क नगर से सायंटिफिक अमेरिकन नाम का एक वैज्ञानिक पत्र निकलता है। यह पत्र बहुत प्रतिष्ठित समझा जाता है। इसके लिखने के तर्ज से मालूम होता है कि यह डाक्टर कुक ही को उत्तरी ध्रुव का आविष्कारक समझता है। उसने पहले तो कुक की यात्रा का संक्षिप्त समाचार प्रकाशित किया; फिर पत्र के दूसरे अङ्क में पीरी और कुक के झगड़े पर अफ़सोस ज़ाहिर करके यह राय दी कि पीरी ने यह बहुत ही अनुचित बात की जो लबराडोर से तार द्वारा कुक के आविष्कार को झूठा ठहराया। इसी अङ्क में उसने सेक्सटंट नामक यन्त्र द्वारा आकाश में सूर्य की अवस्थिति

और अक्षांश आदि जानने की तरकीब भी प्रकाशित की। आपने लिखा कि इस यन्त्र के द्वारा वैज्ञानिक जाँच करना कोई कठिन काम नहीं, अतएव डाक्टर कुक ने उत्तरी ध्रुव पर पहुँच कर जरूर ही इस यन्त्र के द्वारा सब बातें जान ली होंगी। क्यों न हो! आपके इस वैज्ञानिक औदार्य्य का मतलब डाक्टर कुक ही नहीं और भी लाखों आदमी समझ गये होंगे। खैर आपने यह सब करके पीरी की यात्रा का भी कुछ हाल अपने पत्र में छापा है। इस कृपा के लिये कमांडर पीरी ज़रूर ही आपके कृतज्ञ होंगे।

अँगरेजी के प्रसिद्ध मासिक पत्र "रिव्यू आव रिव्यूज़" के सम्पादक स्टीड साहब डाक्टर कुक से मिलने डेनमार्क की राजधानी कोपिनहेगिन गये थे। उनकी राय है कि कुक बड़े सच्चे आदमी हैं। वे जरूर उत्तरी ध्रुव तक हो आये हैं। सम्भव है पीरी भी हो आये हों। पर डाक्टर कुक के बाद पीरी पहुँचे होंगे। स्टीड साहब पीरी को सज्जन नहीं समझते। वे कहते हैं कि पीरी को डाक्टर कुक पर यह अभिशाप न लगाना चाहिए था कि वे झूठे हैं। डाक्टर कुक ने पीरी पर ऐसा अभिशाप नहीं लगाया। पीरी ने कप्तान बर्टलेट को अपने साथ ध्रुव तक ले जाने से इनकार कर दिया। लौटते वक्त डाक्टर कुक के यन्त्र और कागज़ात भी अपने जहाज पर लाने से उन्होंने इनकार किया। यह उन्होंने भलमंसी का काम नहीं किया। इससे उनका

ईर्षाद्वेष प्रकट होता है। अतएव डाक्टर कुक के खिलाफ कही गई उनकी बातें नहीं मानी जायँगी। खैर।

पीरी ने अपनी यात्रा का संक्षिप्त हाल "न्यूयार्क टाइम्स" नामक पत्र में प्रकाशित कराया है। डाक्टर कुक और कमांडर पीरी में से कौन सच्चा और कौन झूठा है, इसका निश्चय तो कुछ दिनों में हो ही जायगा। तब तक पीरी की यात्रा का थोड़ा सा वृत्तान्त सुन लीजिए।

अमेरिका के एक अमीर आदमी उत्तरी समुद्र में शिकार खेलने जाते थे। उन्होंने कहा, डाक्टर कुक, तुम भी चलोगे? कुक ने कहा, बहुत अच्छा, खुशी से। बस डाक्टर साहब उनके साथ चल दिये। वहाँ एक जगह आपने बहुत से यस्किमो जाति के आदमियों को देखा। खाने का सामान भी बहुत सा आपको मिल गया। बस आपने ठेठ उत्तरी ध्रुव तक जाने की ठान दी। और, गये भी और लौट भी आये। पर पीरी के लिए यह काम इतना सहज न था। उन्हें उत्तरी ध्रुव तक भेजने के लिए अमेरिका वालों ने एक सभा बनाई है। उसने हज़ारों रुपये एकत्र कर के पीरी की मदद की है। "रूज़वेल्ट" नाम का जहाज भी उसी सभा का है। आज कोई ४०० वर्ष से लोग उत्तरी ध्रुव तक पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं। सब मिला कर २१ आदमी ध्रुव की तरफ आज तक गये हैं। कोई कुछ अधिक दूर तक गया, कोई कुछ कम। इन्हीं आदमियों में

से पीरी भी एक हैं। आप इसके पहले दो दफे ध्रुव की ओर जा चुके हैं। पिछली दफे आप ८७ अक्षांश तक पहुँच गये थे। उसका वर्णन इस लेख के प्रथमांश में दिया जा चुका है। वहाँ से उत्तरी ध्रुव सिर्फ ३ अक्षांश दूर था। वहाँ तक उनके पहले और कोई नहीं पहुँचा था। इससे उन्होंने एक दफे और कोशिश कर देखना चाहा। उन्होंने कहा, सम्भव है, इस दफे बाकी के ३ अंश भी तै हो जावँ। कमांडर पीरी उत्तरी ध्रुव के आस पास के टापुओं में बहुत समय तक घूमे हैं। उनका तजरिबा कोई २३ वर्ष का है।

६ जुलाई १९०८ को पीरी न्यूयार्क से रवाना हुए। नोवा स्कोटिया में ब्रेटन नाम का जो अन्तरीप है उसके पास सिडनी नाम के बन्दरगाह में १७ जुलाई को उनका जहाज पहुँचा। वहाँ से न्यूफौंडलैंड के किनारे किनारे चक्कर लगाते हुए वे डेविस नाम के मुहाने में पहुँचे। वहाँ से सीधे उत्तर की ओर जाकर वे बेफिन की खाड़ी में दाखिल हुए। वहाँ से चल कर ग्रीनलैंड टापू के यार्क अन्तरीप के पास उन्होंने जहाज का लङ्गर डाला। १ अगस्त को वे वहां से आगे बढ़े। समुद्र में जमे हुए बर्फ के टुकड़े इधर उधर बह रहे थे। बड़ी कठिनता से उन टुकड़ों को बचाते हुए उन्हें अपना जहाज आगे को ओर बढ़ाना पड़ा। धीरे धीरे वे ग्रांटलैंड में पहुँचे। वहां सेरिडन नामक अन्तरीप में उन्होंने अपना जहाज ठहराया।

१ सितम्बर को वे वहाँ पहुँचे। अन्तरीप के पास तो वे पहुँच गये, पर किनारे पर जहाज लगाने में उन्हें बड़ी आफतें झेलनी पड़ीं। जाड़े शुरू हो गये थे। बर्फ की वर्षा हो रही थी। समुद्र जम चला था। इस दशा में जहाज को किनारे ले जाना असाध्य नहीं तो दुःसाध्य जरूर था। हवा भी बड़े जोर से चलने लगी थी। अगर १ मील समुद्र जहाज चलाने लायक था तो दो मील जम गया था। खैर, किसी तरह राम राम करके ५ सितम्बर को जहाज किनारे लग गया।

वहाँ जाड़ों में रहने के लिए एक छोटा सा घर लकड़ी के तख्तों का बनाया गया। खाने पीने का सब सामान उसी में रक्खा गया। फिर यह ठहरी कि शेरीडन अन्तरीप से लेकर कोलम्बिया अन्तरीप तक जगह जगह पर खाने पीने की सामग्री रख आई जाय। इसके लिए बहुत सी बेपहिये की स्लेज नामक गाड़ियाँ तैयार की गईं। उन में कुत्ते जोते गये। सामान लादा गया। और १५ सितम्बर से ५ नवम्बर तक वह सब सामान ढोकर थोड़ी थोड़ी दूर पर बनाये गये झोपड़ों में रखा गया। यह इसलिए किया गया, जिसमें लौटते वक्त खाने पीने का काफी सामान रास्ते में तैयार मिले। तब तक शिकार भी खूब खेला गया। कितने ही रीछ, खरगोश और वालरस नाम के दरियाई घोड़े मारे गये। वैज्ञानिक जाँच

भी उस प्रदेश की की गई।

फरवरी में "रूज़वेल्ट" जहाज वहीं पर छोड़ दिया गया। जितने लोग पीरी के साथ थे, ३ टुकड़ियों में बाँट दिये गये। सब के लिए अलग अलग स्लेज गाड़ियाँ तैयार हुईं। ये तीनों टुकड़ियाँ १५, २१, और २२ फरवरी को अलग अलग तीन आदमियों की अध्यक्षता में उत्तरी ध्रुव के लिए रवाना हुईं। एक के अध्यक्ष हुए कप्तान बार्लेट दूसरी के अध्यापक मारविन, तीसरी के कमांडर पीरी। सब मिलाकर इस चढ़ाई में ७ गोरे और ५९ यस्किमो जाति के वहीं के आदमी थे। स्लेज गाड़ियों की संख्या २३ थी और कुत्तों की १४०।

कोलम्बिया अन्तरीप में तीनों टुकड़ियाँ एकत्र हुईं। कुत्तों को विश्राम दिया गया। साथ की गाड़ियों की मरम्मत की गई। खाने पीने का सामान फिर से सँभाला गया। २७ फरवरी तक यह सब होता रहा। बार्टलेट साहब आगे बढ़े। वे बहुत दूर तक निकल गये उनके पीछे दूसरी टुकड़ी वालों को बर्फ ने बहुत सताया। ज़ोर की हवा ने बर्फ के टुकड़ों को तोड़ फोड़ डाला। समुद्र खुल गया। उस पर जो बर्फ जमा हुआ था वह बह गया। अब वह पार कैसे किया जाय? दो गाड़ियाँ वहाँ पर टूट गईं। फिर आदमी पीछे भेजे गये। वे कोलम्बिया अन्तरीप से दो और गाड़ियाँ ले गये। चौथे दिन खुले समुद्र को किसी तरह पार करके

पिछली दोनों टुकड़ियों ने बार्टलेट वाली टुकड़ी को जा पकड़ा, जाड़ों के बाद ५ मार्च को सूर्य के पहले पहल दर्शन हुए। ११ मार्च को फिर कूच हुआ। वहाँ से सिर्फ १६ आदमी, १२ गाड़ियाँ और १०० कुत्ते पीरी ने साथ रक्खे। बाकी के कुछ वहीं रहे, कुछ लौटा दिये गये। दो तीन गोरे भी आगे न बढ़ सके। एक का पैर सूज गया। एक रास्ता ही भूल गया। इससे वे पीछे पड़े रह गये। मारटिन और बाटलेट ने बहुत दूर पीरी का साथ दिया। परन्तु खाने पीने का सामान कम रह जाने से मारटिन को भी पीछे ही पड़ा रह जाना पड़ा। रहे बार्टलेट, सो उनसे पीरी ने कहा, आप क्यों उत्तरी ध्रुव तक जाने का कष्ट उठायेंगे। मैं ही अमेरिका की तरफ से वहाँ तक जाने का बीड़ा उठा आया हूँ। सो अब मुझे ही जाने दीजिए।

कमांडर पीरी बड़ी मुस्तैदी और बहादुरी से आगे बढ़ने लगे। किसी दिन वे २० मील चलते थे, किसी दिन २५ मील। मुसीबतों का तो कुछ ठिकाना ही न था। मारे जाड़ों के दक्खिनी यस्किमो लोगों तक के नाकोंदम हो गया। अँगुलियाँ सूज गईं। चेहरों की बुरी दशा हो गई। पीरी के क्लेशों को तो कुछ पूछिये ही नहीं। जहाँ ये लोग विश्राम के लिए ठहरते थे, वहीं पर कभी कभी बर्फ फटकर खुला समुद्र निकल आता था और ये लोग डूबने से बाल-बाल बच जाते थे। चलते चलते कमांडर पीरी ८८ अक्षांश तक

जा पहुँचे। अब उन्होंने सोना और आराम करना बहुत कम कर दिया। दौड़ने ही की उन्होंने धुन बाँधी। ज़रा आराम करना और फ़िर दौड़ लगाना। चौबीसवें पड़ाव पर पीरी ने जो यन्त्र से दूरी जाँची तो मालूम हुआ कि वे लोग अक्षांश ८९ कला २५ पर पहुँच गये हैं। अब वे बारह बारह घंटे में चालीस चालीस मील चलने लगे। छब्बीसवें पड़ाव पर वे अक्षांश ८९ कला ५७ पर जा पहुँचे। वहाँ से उत्तरी ध्रुव केवल ३ कला अर्थात् ३ मील से कुछ अधिक दूर था। बस फिर क्या था, फिर कूच किया गया और वह तीन मील का सफ़र भी तै कर डाला गया। ठीक उत्तरी ध्रुव पर जा कर ५ एप्रिल १९०९ को पीरी ने उसे अपने पैरों के स्पर्श से पुनीत किया।

२६ घण्टे तक पीरी उत्तरी ध्रुव की जाँच करते रहे। वहाँ से पाँच मील पर बर्फ़ के टूट जाने से समुद्र निकल आया था। उसकी गहराई नापने की आपने कोशिश की। पर थाह न मिली। इस नाप जोख में नापने का तार ही टूट गया।

अब पीरी ने बड़ी फुर्ती से लौटने की ठानी। लौटते वक्त उन्होंने अपनी रफ्तार और भी बढ़ा दी। जितनी दूरी को उन्होंने जाते समय २६ पड़ाव में तै किया था उतनी को लौटती बार सिर्फ़ १५ पड़ाव में तै किया। इस प्रकार दौड़ने में साँड़नी सवार को भी मात करके कमांडर साहब २३ एप्रिल को कोलंबिया अन्तरीप तक पहुँच गये। दो

कूचों में वे अपने जहाज "रूजवेल्ट" के पास आगये और उसे सुरक्षित पाया। दो महीने तक वहीं रह कर उन्होंने कितने ही प्रकार की वैज्ञानिक जाँच की। इस बीच में जो सामग्री मार्ग के पड़ावों में रह गई थी वह भी वापस आ गई। १८ जुलाई १९०९ को वहाँ से कूच हुआ। ५ दिसम्बर को वे लबराडोर में पहुँच गये। वहीं से आपने तार दिया—"उत्तरी ध्रुव पर मैं अमेरिका का झण्डा गाड़ आया।"

[दिसम्बर १९०९

विसूवियस के विषम स्फोट।

(१)

पृथ्वी पहले एक प्रकार का जलता हुआ प्रवाही पदार्थ थी। लोहा और ताँबा आदि धातु गलने पर जैसे तरल और अग्निमय हो जाते हैं, पृथ्वी भी वैसी ही थी। वह धीरे धीरे ठण्डी हो गई है। उसके पेट में, परन्तु, अभी तक ज्वाला भरी हुई है। पृथ्वी का जो भाग समुद्र के पास है वहाँ बड़ी बड़ी दरारों से, कभी कभी, पानी का प्रवाह पृथ्वी के जलते हुए पेट में चला जाता है। वहाँ आग का संयोग होने से पानी की भाफ हो जाती है और वह बड़े वेग से पृथ्वी के ऊपरी भाग को तोड़ कर बाहर निकलने का यत्न करती है। इस प्रकार की भीषण भाफ जब पृथ्वी के उदर में इधर उधर आघात करती है तभी भूकम्प आता है। जहाँ वह पृथ्वी को तोड़ कर ऊपर निकलने लगती है वहाँ ज्वालामुखी पर्वत हो जाते हैं। ऐसे पर्वतों के नीचे की भाफ निकल जाने पर वे शान्त हो जाते हैं। जब फिर

कभी वहाँ पानी का प्रवाह पहुँचता है, तब फिर वहाँ की आग कुपित हो उठती है और उत्पन्न हुई भाफ पहले मार्ग से ऊपर निकलने लगती है। इस निकलने में पृथ्वी के उदर के पदार्थ वह ऊपर फेंकती है।

पानी पहुँचने से पृथ्वी के पेट की ज्वाला कहीं कहीं अत्यन्त कुपित हो उठती है, और बटलोही के ढकने के समान, पृथ्वी के ऊपरी भाग को वह बलपूर्वक ऊपर उठा देती है। ऐंडीज़ और अलप्स आदि ऊँचे ऊँचे पर्वत इसी प्रकार ऊपर उठ आये है। भूगर्भ-शास्त्र के जानने वालों ने इस बात को सप्रमाण सिद्ध किया है।

जिन पर्वतों में पृथ्वी के ऊपर की उबलती हुई भाफ के निकलने का मार्ग हो जाता है, अर्थात् जिनमें भीतर से ऊपर तक, एक विशाल कुआँ सा बन जाता है उनसे, कभी कभी, आग की विकराल ज्वाला निकल पड़ती है। ऐसे पर्वतों को ज्वालामुखी अथवा अग्निगर्भ पर्वत कहते हैं।

संसार में जितने अग्निगर्भ पर्वत हैं उन सब में विसूवियस बड़ा ही भयङ्कर है। प्रशान्त महासागर के वेस्टइंडीज़ नामक द्वीपों में, उस वर्ष, जो एक ज्वालामुखी का स्फोट हुआ और उससे एक शहर का शहर विध्वंस हो गया, वह विसूवियस के हृत्कम्पकारी स्फोटों के सामने कोई चीज़ न था। विसूवियस, इटली में, नेपल्स की खाड़ी से थोड़ी दूर पर है। उसके चारों ओर घनी बस्ती

है। अङ्गूर और शहतूत के बाग दूर दूर तक चले गये हैं। तरु, लता, पशु, पक्षी और मनुष्यों से परिपूर्ण, ऐसी मनोहर भूमि के बीच, यह भीम भूधर खड़ा है। समुद्र की सतह से यह कोई ४,००० फुट ऊँचा है।

जिस मुँह से विस्यूवियस ज्वलन्त ईंट, पत्थर, राख भाफ और धातु-रस उगलता है उसकी परिधि ५ मील है। यह अनादि अग्नि गर्भ पर्वत है। किसी समय यह एक दूसरे ही मुख से ज्वाला वमन करता था। इस प्राचीन मुख का घेरा नये मुँह से भी बड़ा है। परन्तु उस मुँह ने चिरकाल से मौन धारण कर लिया है। विस्यूवियस की इस समय, जितनी ऊँचाई है, प्राचीन समय में वह उससे दूनी थी। परन्तु एक महा वेगवान् स्फोट में उस के सब से ऊँचे शिखर उड़ गये। तब से उसे यह वामन रूप मिला है।

विस्यूवियस कई सौ वर्ष तक शान्त था। जान पड़ता था कि उस की जठराग्नि मन्द हो गई और वह हमेशा के लिए शिथिल पड़ गया। इसीलिए मनुष्यों ने उस के इर्द गिर्द अनेक बाग लगा दिये, अनेक नगर और गाँव बसा दिये; यहाँ तक कि पर्वत के ऊपर उस के ज्वाला वाहक मुँह तक वे अपनी भेड़ बकरियां चराने के लिए ले जाने लगे। उस के शिखर नाना प्रकार के हरे हरे पेड़ों और लताओं से ढक गये। उन को देख कर यह बात कभी मन में न आती थी कि वह अग्नि गर्भ पर्वत है।

६३ ईसवी में अकस्मात् भूडोल आया और विस्यूवियस के पेट में फिर, सैकड़ों वर्ष के बाद, गड़बड़ शुरू हुई। १६ वर्ष तक भूडोल आते रहे और जिस प्रान्त में यह पर्वत था उसके निवासियों के कलेजे को कँपाते रहे। अनेक मकान गिर गये; मन्दिरों के अनेक शिखर टूट पड़े; ऊँचे ऊँचे महल पृथ्वी पर उलटे लेट रहे। आगे आने वाले तूफ़ान की १२ वर्ष-व्यापी यह एक छोटी सी सूचना थी। मनुष्य-संहारक प्रलय का यह आदि रूप था। भूडोल के धक्के धीरे धीरे अधिक उग्र होते गये। अन्त में २४ अगस्त ७९ ईसवी को विस्यूवियस का भीषण मुँह, महा भयङ्कर अट्टहास करके, खुल गया। क्षुब्ध हुये समुद्र में जिस प्रकार एक छोटी सी डोंगी हिलती है, एक निमेष में कई हाथ ऊपर उठ कर फिर नीचे आ जाती है—स्फोट होने के पहले, उसी प्रकार, पृथ्वी हिल उठी। सपाट जमीन पर भी जाती हुई गाड़ियाँ उलट गईं; मकान गिरने लगे और उनके भीतर से मनुष्य भागने लगे; समुद्र किनारों से कोसों दूर हट गया; अनन्त जलचर सूखी जमीन में पड़े रह गये। यह हो चुकने पर विस्यूवियस ने अपने पेट के पदार्थ वमन करना आरम्भ किया। प्रलय काल के मेघ के समान भाफ की घोर घटा हाहाकार करते हुए उस के मुँह से निकलने लगी। ठहर ठहर कर सैकड़ों वज्रपात के समान महाप्रचण्ड गड़गड़ाहट प्रारम्भ हुई।

भाफ के साथ राख और पत्थर उड़ने लगे और दूर दूर तक गिर कर देश का सर्वनाश करने लगे। बिजली इतनी भीषणता से चमकने लगी कि पचास पचास कोस दूर तक के लोगों की आँखों में चकाचौंध आ गई। मुँह के ठीक बीच से जलते हुए धातु और पत्थरों की राशि आकाश की ओर कोसों ऊपर उड़ने लगी। तीन दिन तक आस पास का देश अन्धकार मय हो गया। विस्यूवियस ने महा प्रलय कर दिया। उसके पास के हरक्युलेनियम, पाम्पियाई और स्टेबिया नामक तीन शहर समूल लोप हो गये। उनके ऊपर बीस बीस फुट गहरी बजरी, राख और पत्थर आदि की तह जम गई। सारे जीवधारियों का सहसा संहार हो गया। विस्यूवियस ने अपने मुँह से इतनी भाफ उगली कि उसके चारों ओर महाभयङ्कर और महावेगवान नद बह निकले और अपने साथ उस पर्वत के भीतर से निकले हुए राख और पत्थर आदि पदार्थों को बहा कर, उन्होंने बाग़, खेत, गाँव, नगर जो कुछ उन्हें मार्ग में मिला, सबको दस दस पन्द्रह पन्द्रह हाथ ज़मीन के नीचे गाड़ दिया। इस स्फोट में अनन्त प्राणियों ने अपने प्राण खोये।

इसके बाद कोई १५०० वर्ष तक विस्यूवियस प्रायः शान्त रहा। बीच में कभी एक आध बार उसने धीरे से श्वास अथवा डकार लेकर ही सन्तोष किया। इन १५००

वर्षों में इस ज्वालामुखी पर्वतराज की फिर पहले की सी अवस्था हो गई। सब कहीं लतायें लटक गईं, घास से उसके शिखर लहलहे हो गये, अङ्गूर और शहतूत के उद्यान उसके आसपास उसकी शोभा बढ़ाने लगे। कितने ही गाँव बस गये। यह सब विस्यूवियस से देखा न गया। फिर भूडोल आरम्भ हुआ। छः महीने तक पृथ्वी हिलती रही। १६ दिसम्बर १६३१ ईस्वी को फिर उदर-स्फोट हुआ। राख और पत्थर के समूह के समूह हृदय विदारी नाद करते हुए उड़ने लगे और सैकड़ों मील दूर जा जा कर गिरने लगे। यहाँ तक कि छोटे छोटे पत्थर कान्सेन्टिनोपल तक पहुँचे। भाफ के पानी की प्रचण्ड नदियाँ बन गईं। उनमें राख पत्थर मिल जाने से कीचड़ हो गया। कीचड़ के ये सर्व ग्रास कारी भयावने नद बहे और अपीनाइन पर्वत के नीचे तक चले गये। इस बार गले हुए धातु और पत्थरों की अग्निरूपिणी नदियों के भी प्रवाह बहे, और महा भीषण रूप धारण करके पशु, पक्षी, मनुष्य, घास, फूस, वृक्ष, लता आदि को भस्म करते हुए बारह तेरह मुखों से समुद्र में आ गिरे। इस स्फोट में १८००० मनुष्यों का संहार हुआ।

जब से यह स्फोट हुआ तब से विस्यूवियस को पूरी शान्ति नहीं मिली। बीच बीच में आप आग, पत्थर, भाफ, राख उगलते ही रहे हैं। १७६६, १७६७, १७७९,

१७९४ और १८२२ ईसवी में आपने विशेष पराक्रम दिखाया।

१७९४ ईसवी के स्फोट में पिघले हुए पत्थरों की एक धारा विस्यूवियस ने निकाली। वह १२ से ४० फुट तक गहरी थी। टोरिज्यिल ग्रेको नामक नगर को तबाह करके वह ३५० फुट तक समुद्र में चली गई। समुद्र में प्रवेश के समय वह १२०० फुट चौड़ी थी। १८२२ ईसवी के स्फोट में धुवें के विशाल स्तम्भ १०००० फुट तक आकाश में उड़े। १८५५ में चटानों के टुकड़े ४०० फुट तक ऊँचे उड़े और स्फोट के समय ऐसी घोर गड़गड़ाहटें हुईं कि लोगों का कलेजा काँप उठा। वे सब नेपल्स को भाग गये।

कुछ दिन से विस्यूवियस की ज्वाला वमन करने की शक्ति क्षीण सी हो गई थी। परन्तु यह क्षीणता जाती रही है। अब फिर आपने विकराल रूप धारण किया है। फिर आप आग, पानी, ईंट, पत्थर बरसाने लगे हैं। यह अद्भुत तमाशा देखने के लिए दूर दूर से लोग नेपल्स को जा रहे हैं। विस्यूवियस के पास एक यन्त्रशाला स्थापित है। वहाँ उसकी अग्नि लीला की दिनचर्या रक्खी जाती है और जो जो दृश्य दिखलाई पड़ते हैं उनका वैज्ञानिक विचार किया जाता है। १८८० ईसवी से वहाँ तार के रस्सों की रेल निकाली गई है। यह रेल विस्यूवियस के मुख से १५०

गज तक चली गई है। इसी रेल पर लोग इस ज्वलन्त देव के दर्शन करने जाते हैं।

हरक्युलैनियम और पाम्पियाई, जिन को विस्यूवियस ने १५ हाथ पृथ्वी के नीचे गाड़ दिया था और बहुत ढूँढ़ने पर भी जिन का कोई निशान तक न मिलता था, अब ज़मीन से खोद कर निकाले गये हैं। हरक्युलैनियम एक छोटा सा नगर है; परन्तु पाम्पियाई बहुत बड़ा है। एक कुँवा खोदते समय पाम्पियाई का पहले पहल पता १७४८ ईस्वी में लगा। तब से बराबर उसकी खुदाई और खोज हो रही है। विस्यूवियस से वह कोई एक ही मील दूर है। उस के मकान, उस के मन्दिर और उसकी नाटक शालायें आदि इमारतें सब जैसी की तैसी निकली हैं। उन में रक्खा हुआ सामान भी बहुत सा निकला है। मनुष्यों की ठठरियां भी पाई गई हैं। १८०० वर्ष के पहले रोमन लोगों के इतिहास को पाम्पियाई ने प्रत्यक्ष कर दिया है। उस पर अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं और अब तक लिखी जा रही हैं। उन में लिखे गये वर्णन बहुत ही मनोरंजक हैं। उस समय इटली वालों के मकान कैसे थे; उनके रहने की रीति कैसी थी; उनके घरों में किस प्रकार का सामान रहता था; उनके आमोद-प्रमोद किस प्रकार के थे—इत्यादि बातों का पता पाम्पियाई से खूब लगा है। कभी बुराई से भी भलाई निकलती है। विस्यू-

वियस के स्फोट से यदि पाम्पिपाई दब न जाता तो प्रायः दो हजार वर्ष पीछे अपने पूर्वरूप में वह क्यों दिखलाई देता ?

[जनवरी १९०५

२

जैसा कि इस लेख के पूर्वोक्त में कहा जा चुका है पृथ्वी के पेट में अपार गरमी भरी हुई है। उसका ऊपरी भाग तो ठण्डा है: पर भीतरी गरम। कुँवे के भीतर उतरने पर बहुत गरमी मालूम होती है। यदि दूर तक पृथ्वी खोदी जाती है तो गरम पानी, निकलने लगता है। गरम पानी के कितने ही चश्मे पहाड़ों से निकलते हैं। इसी से स्पष्ट है कि पृथ्वी के भीतर गरमी है अथवा यों कहिए कि आग जल रही है। यह धीरे धीरे ठण्डी होती जाती है; अर्थात पृथ्वी के पेट की गरमी धीरे धीरे कम हो रही है। यह वैज्ञानिक नियम है कि जो चीज ठण्डी होती जाती है वह सिकुड़ती है। गरमी से पदार्थों का आकार कुछ बड़ा हो जाता है और सरदी से कम।

पृथ्वी के भीतर सब कहीं बराबर गरमी नहीं: कहीं अधिक है कहीं कम। जो भाग बहुत अधिक गरम है वह जब ठण्डा होता है तब कम गरम भागों की अपेक्षा अधिक सिकुड़ जाता है। इसका फल यह होता है कि उसके और कम गरम भागों के बीच की जगह खाली रह जाती है। वहाँ पर महा भयङ्कर कन्दरायें सी बन जाती हैं। और उनके ऊपर पृथ्वी के कम गरम भाग मिहराबों की तरह खड़े रह जाते हैं। ये मिहराबें जब अपने ऊपर का वजन

नहीं सँभाल सकतीं तब गिर जातीं हैं और उनके ऊपर वाले भूभाग उन्हीं के साथ इस वेग से नीचे की कन्दराओं में जा पड़ते हैं कि उनके गिरने से बड़ी ही भीषण गरमी पैदा हो जाती है। इसे गरमी नहीं, प्रचण्ड ज्वाला कहना चाहिए। यदि ये घटनायें कहीं समुद्र के पास हुईं और समुद्र का जल दरारों से होकर वहाँ तक पहुँच गया तो उसकी भाफ हो जाती है। यह भाफ ऊपर निकलने की कोशिश करती है और यदि कहीं थोड़ा भी मार्ग निकलने का मिल गया तो हाहाकार करती हुई पृथ्वी के ऊपर आ जाती है। वही ज्वालामुखी पर्वत हो जाते हैं। जिस समय पृथ्वी के पेट की यह भीषण गरमी और भाफ ऊपर निकलने की कोशिश करती है, उस समय उसका वेग भीतर ही भीतर दूर तक फैल जाता है और पृथ्वी कँपने लगती है। इसी को भूकम्प कहते हैं। पर ऊपर निकलने को जगह मिल जाने से कम्प बन्द हो जाता है और ईंट, पत्थर, राख, भाफ और गली हुई चीज़ों के समूह बड़े ही हृदय-विदारी शब्द करते हुए ज्वालामुखी के मुँह से निकलने लगते हैं।

ज्वालामुखी पर्वतों के होने के कई एक वैज्ञानिक कारण बतलाये जाते हैं; परन्तु आज कल पूर्वोक्त कारण अधिक मान्य समझा जाता है। इस लेख के पूर्वांश में लिखा जा चुका है कि कुछ दिनों से इटली का विख्यात ज्वाला-गर्भ पर्वत, विसूवियस, फिर ज्वाला उगलने के लक्षण दिखला

रहा है। गत अप्रेल में यह अनुमान सच निकला। कई दिनों तक विस्यूवियस ने बड़ी ही भयङ्कर अग्नि वर्षा की। इसके कुछ ही दिनों बाद अमेरिका के कैलीफार्निया प्रदेश की राजधानी सान फ्रांसिस्को के विध्वंस होने की खबर आई। तीन मिनट के भूकम्प ने वहाँ की अनेक इमारतों को भूमिसात् कर दिया। इस कारण कितने ही घरों में आग लग गई और प्रायः तीन चौथाई शहर जल कर खाक हो गया। यह बहुत ही सुन्दर और बहुत ही बड़ा शहर था। आग लगने के कारण अनन्त धन और जन-समूह का नाश हो गया। उसकी सोलह सोलह बीस बीस मंज़िला इमारतें गिर गईं और आग लग कर राख हो गईं। वैज्ञानिकों की राय है कि सान फ्रांसिसको का भूमिकम्प और विस्यूवियस की अग्नि वर्षा, दोनों घटनायें, एक ही कारण से हुईं। यह कारण वही है जिसका उल्लेख ऊपर किया गया है।

इसका ठीक ठीक पता नहीं लगता कि कब से ज्वाला वमन करने की शक्ति विस्यूवियस में आई। किसी किसी का ख्याल है कि वह अनादि काल से ज्वालामुखी है। एक पुस्तक में इस पर्वत के स्फोटों का बहुत ही विस्तृत वर्णन, अभी हाल में हमारे देखने में आया। अतएव उसके आधार पर फिर इस विषय पर कुछ लिखा जाता है। पुनरुक्ति माफ हो।

इस पर्वत के ज्वाला उगलने का पहला वर्णन

७९ ईसवी का है। यह इतना प्रलयङ्कर स्फोट था कि विस्यूवियस के अग्निगर्भ मुख से निकली हुई राख से पाम्पियाई और कीचड़ से हरक्यूलेनियम ये दो शहर बिलकुल ही दब गये। इसके बाद २०३ और ४७२ ईसवी में फिर दो छोटे छोटे स्फोट हुए। पर उनसे विशेष हानि नहीं हुई। १५०० ईसवी तक सब छोटे बड़े मिला कर ९ स्फोट हुए। इसके बाद १५०० से १६३१ तक विस्यूवियस बिलकुल ही शांत रहा। इस बीच में एटना नाम के ज्वालामुखी ने खूब आग उगली और नोवा नाम का एक और ज्वालामुखी ज़मीन के पेट से निकल आया। कोई डेढ़ सौ वर्ष बाद विस्यूवियस के उदर में फिर आग भभकी। १६ दिसम्बर १६३१ को फिर भयङ्कर स्फोट हुआ। खाक और पत्थरों की वर्षा शुरू हुई। पास के पाँच सात नगरों का नाश हो गया। नेपल्स के भी बरबाद हो जाने के लक्षण दिखाई देने लगे। पर वह बच गया। हज़ारों आदमियों का नाश हुआ। वे जल कर, झुलसकर और दब कर मर गये। १७३७, १७६० और १७६७ में फिर अग्नि स्फोट हुए। उनसे बहुत कुछ हानि हुई। १७७९ के स्फोट में २,००० फुट की ऊँचाई तक जलते हुए पत्थर उड़े। १७९४ का स्फोट और भी अधिक भयङ्कर था। उस में जलते हुए पदार्थों की तरल नदियाँ बह निकलीं और समुद्र में जा मिलीं। १९ वीं शताब्दी में

१० स्फोट हुए। उन में कई स्फोट बड़े भयङ्कर थे। अप्रेल १८७२ का स्फोट सब से अधिक भीषण था। इस दफे विस्यूवियस के चारों तरफ जलते हुए तरल पदार्थों की नदियाँ बड़े ही वेग से बहीं। ४,००० फुट की ऊँचाई तक आग, पत्थर और गली हुई चीजें उड़ीं। राख तो ८,००० फुट की ऊँचाई तक उड़ी। तरल अग्नि की नदियाँ बह कर नेपल्स के पास तक पहुँच गईं। पर शहर किसी तरह जलने से बच गया। इस स्फोट से कितने ही नगर विध्वन्स हो गये। १८९१ में फिर एक स्फोट हुआ। पर उसमे बहुत ज्यादा हानि नहीं हुई।

यद्यपि अनेक प्रकार के यन्त्र बनाये गये हैं जिन से भूकम्प की सूचना पहिले ही से हो जाती है और ज्वाला-मुखी पर्वतों के भावी स्फोट का भी ज्ञान हो जाता है, तथापि अनेक बार देखा गया है कि इन यन्त्रों ने अपना काम ईमानदारी से नहीं किया। वे इस प्रकार की सूचना देने के लिए जरूर हैं, परन्तु बहुधा वे इन दुर्घनाओं का समाचार पहले ही से देने में असमर्थ हो जाते हैं। विस्यू-वियस में भी एक वेधशाला है। उस में अनेक प्रकार के बहुमूल्य यन्त्र हैं और वैज्ञानिक विद्वान् हमेशा वहाँ रहते हैं। वे विस्यूवियस के दैनिक रंगढंग का हिसाब रखते हैं। पर गत अप्रेल के आरम्भ में विस्यूवियस ने जो सहसा विकराल अग्नि-वर्षा शुरू कर दी, उस की

ख़बर उनको भी न थी। एकाएक भूमि कम्प हो कर विस्यूवियस के मुँह से आग, पत्थर, राख और भाफ की वर्षा आरम्भ हो गई।

विस्यूवियस के और कई स्फोटों की तरह यह स्फोट भी बहुत भयानक था। इस में पत्थरों की बेहद बर्षा हुई। उस के डर से हज़ारों आदमी भाग भाग कर विशेष मज़बूत घरों में जा घुसे; पर राख और पत्थरों की इतनी मोटी तह मकानों की छतों पर जमा हो गई कि उस के वज़न से छतें गिर पड़ीं और आदमी नीचे दब कर मर गये। जो बस्तियाँ पर्वत के नीचे, थोड़ी थोड़ी दूर पर, थीं, उनका तो एकदम ही संहार हो गया। वे बिलकुल ही ध्वन्स हो गईं। बड़े बड़े क़सबे, समूचे के समूचे, नष्ट हो गये—कोई जल गये, कोई राख पत्थरों के नीचे दब गये, कोई गिर कर भूमिसात् हो गये। मनुष्यों और पशुओं का कितना नाश हुआ, इसका हिसाब लगाना कठिन है। कोसों तक जहाँ खेत, वाटिकायें और अङ्गूर के बाग खड़े थे, वहाँ हरियाली की जगह ख़ाक बिछ गई।

विस्यूवियस के एक शिखर पर जो वेधशाला है वह ऐसी जगह है और इतनी मज़बूत है कि १८७२ ईसवी के स्फोट से भी उसे कम हानि पहुँची थी और इस बार इससे भी कम ही पहुँची है। वहाँ के अध्यक्ष, अध्यापक मट्टूकी, स्फोट के समय, वेधशाला के किवाड़ और खिड़कियाँ बन्द किये हुए

बराबर भीतर बैठे रहे। यद्यपि उनके कितने ही यन्त्र टूट फूट गये और उन्हें बहुत कष्ट हुआ तथापि वे वहाँ से नहीं हटे। उन्होंने स्फोट-सम्बन्धी बहुत सी बातें जानी हैं। शीघ्र ही वे सर्व साधारण के लाभ के लिए प्रकाशित की जायँगी। उनकी इस वीरता और निर्भयता पर प्रसन्न होकर इटली के बादशाह ने, सुनते हैं, कोई ख़िताब दिया है।

विलायती अखबारों में इस स्फोट का वर्णन लिखे जाने तक धुंवे के बादल विस्यूवियस के आस पास दूर दूर तक छाये हुए थे। यहाँ तक कि पास की खाड़ी में, अंधेरे के कारण, जहाज़ों का आना जाना तक बन्द था। इससे विस्यूवियस का डीलडौल अच्छी तरह देखने को नहीं मिला। परन्तु लोगों का अनुमान है कि जैसा ७९ ईसवी में हुआ था वैसा ही इस दफे भी पर्वत का ज्वालागर्भ शिखर गिर कर चूर हो गया होगा। इसके सिवा और भी कितने ही रद्दो-बदल हुए होंगे। यह अजीब पहाड़ है। इसके शिखर इसी तरह टूटा फूटा करते हैं और फिर धीरे धीरे, भीतर के पदार्थ ऊपर आ आ कर, उन्हें ऊँचा किया करते हैं या नये नये शिखर पैदा कर देते हैं।

एक साहब ने विस्यूवियस के इस नये स्फोट का आँखों देखा हाल प्रकाशित किया है। वे कहते हैं कि स्फोट के एक दिन पहले इस बात की कुछ भी ख़बर लोगों को न थी कि कल विस्यूवियस आग उगलना शुरू करेगा। २४ घण्टे बाद,

विस्यूवियस के ज्वालागर्भ मुँह से धुवें के बादल निकलने लगे। धीरे धीरे उनका परिमाण बढ़ा। धुवाँ नेपल्स तक पहुँचा और सारे शहर में छा गया। कुछ देर में जोर से हवा चलने लगी और उस के साथ ही "गड़ाम" की आवाज़ सुन पड़ी। बस फिर क्या था, प्रलय सी होने लगी। कलेजे को कँपानेवाली महाविकराल गड़गड़ाहट शुरू हुई। आकाश-पाताल एक करने वाली विकट गर्जना को सुनकर लोग एकदम घबड़ा उठे। किवाड़ और खिड़कियाँ टूटने लगीं और यह मालूम होने लगा कि तोपों की बाढ़ पर बाढ़ दागी जा रही है। दूसरे दिन सबेरे सुन पड़ा कि विस्यूवियस के मुँह से निकली हुई तरल अग्निधारा ने कई गाँव जला दिये। पर कुछ गाँव वाले मरने से बच गये। वे धारा के पहुँचने के पहले ही भाग गये थे। विस्यूवियस के मुँह तक जो रेल बनी थी वह बिलकुल ही बरबाद हो गई। खाक और धुवाँ चारों तरफ छा गया। नेपल्स में दिन की रात हो गई। विस्यूवियस धुवें के भीतर घुस गया। उसका कोई भाग न दिखलाई देने लगा। तीन दिन तक यही दशा रही। कोई विशेष बात नहीं हुई। चौथे दिन बिजली की शक्ल की आग की लपटें विस्यूवियस के ऊपर उठने और कई सौ फुट आसमान में घुसने लगीं। पत्थर, राख और अग्निधारा ने अनेक गाँव और नगर उजाड़ दिये। अनन्त जीवों का नाश कर डाला। जब विस्यूवियस कुछ

शान्त हुआ तब देखा तो हरी घास, हरी पत्ती, हरे पेड़ हरे पौधे एकदम ही नष्ट हो गये थे। सब कहीं राख और धुयें का रङ्ग व्याप्त था। आदमियों का रङ्ग भी वैसा ही हो गया था। तब तक कुछ कुछ अँधेरा छाया हुआ था। उसी में लोग भूतों की शक्ल के बने हुए इधर उधर घूम रहे थे। नेपल्स के होटल खाली हो गये थे। लोग भाग कर रोम चले गये थे। इटली के बादशाह और राजेश्वर एडवर्ड और उनकी महारानी विस्यूवियस देखने को पधारे। करोड़ों की धन सम्पत्ति जो इस स्फोट से नष्ट हुई है और जो हजारों आदमी मरे और बेघर द्वार के हो गये हैं उन पर कृपा करके दयाशील जन चन्दा कर रहे हैं। इटली के बादशाह ने बहुत कुछ मदद की है। एडवर्ड सप्तम ने भी कुछ दिया है।

स्फोट के शुरू होने पर विलायती पत्रों में जो तार प्रकाशित हुए थे, उनका संक्षिप्त आशय देकर हम इस लेख को समाप्त करते हैं। ९ अप्रेल को नेपल्स से खबर आई कि विस्यूवियस का स्फोट फिर शुरू हुआ। आकाश में ४५० फुट तक आग की ज्वाला उड़ रही है। हर भयङ्कर नाद के बाद पृथ्वी के पेट में गड़गड़ाहट होती है। आस पास की जमीन हिल रही है। गाँव और नगर जल रहे हैं। आदमी मारे डर के पागल की तरह भाग रहे हैं। भगोड़ों से नेपल्स भर गया है। कोई दो लाख आदमी बे घर-द्वार के होकर

भाग आये हैं। राख बरस रही है। नेपल्स राख के भीतर घुसा जा रहा है। ९ तारीख को खबर आई की रेत की वृष्टि के कारण बाहर निकलना कठिन हो गया है। कीचड़ की भी वर्षा हो रही है। इस से सड़कों पर गाड़ियाँ नहीं चल सकतीं। आज आग के रूप में भूगर्भ की गली हुई चीज़ों की नदियाँ बहने लगी हैं। उन्होंने अनेक सुन्दर सुन्दर वस्तुओं का समूल नाश कर दिया। विस्यूवियस के पास एक जगह ज़मीन फट गई। उससे आग की तरल धारा, २०० गज़ चौड़ी, बोसकोंटिकेसी नगर की तरफ बही। यह देख कर नगर वासियों ने जीने की आशा छोड़ दी। वे पागल से हो गये और जिस को जो मार्ग मिला उसी से वह भागा। सब लोग भागने न पाये थे कि वह अग्नि सरिता आ पहुँची और शहर के भीतर से हो कर निकल गई। अनन्त हानि हुई। १० अप्रेल को भाफ की वर्षा कुछ कम हो गई; पर ११ को फिर वह प्रबल हो उठी। सरकारी हुक्म से नेपल्स में मकानों की छतें कहीं कहीं उतार दी गई हैं, जिस में राख के वज़न से वे गिर न जाँय। कई इंच गहरी रेत और राख शहर में सब तरफ बिछ गई है।

विस्यूवियस के शांत होने पर आदमी फिर अपने उजड़े हुए घरों को लौटने लगे। अब तक शायद कितने ही मकान फिर से बन गये हों। किसी किसी विषय में

मनुष्य के धैर्य और उस की सहन शीलता का विचार कर के आश्चर्य होता है। जिस विस्यूवियस ने अनेक वार प्रलय करके असंख्य धन और जन का नाश किया उसी के पास जा जा कर फिर आदमी बस गये। इस दफ़े भी वही हो रहा है। उस साल मार्टिनीक और सेंटविंसेंट में जो स्फोट हुआ था उस से कोई ५० हज़ार आदमी मरे थे। पर वहाँ भी अब पूर्ववत् बस्ती हो गई है। सान फ्रांसिसको भी नये सिरे से बन रहा है और आबाद हो रहा है। इसी तरह कुछ दिनों में विस्यूवियस के पास के उजाड़ गाँव और नगर भी फिर पूर्ववत् आबाद हो जायँगे। क्या ही अच्छा हो यदि किसी अच्छे विषय में नाकामयाबी होने पर, आदमी इसी तरह के सहन शीलत्व, धीरज, उद्योग और परिश्रम से काम लें।

[जुलाई १९०६

आचार्य द्विवेदी जी लिखित अन्य ग्रन्थ।

सुमन

इसके विषय में इतना ही कहना काफी है कि यह पूज्य पं० महावीरप्रसाद जी द्विवेदी की फुटकर कविताओं का संग्रह है। पूज्य द्विवेदी जी केवल हमारे गद्य के ही युग प्रवर्तक आचार्य नहीं हैं, वरन् हिन्दी कविता की आधुनिक क्रान्ति के अग्रदूतों में भी उनका स्थान प्रमुख है। मूल्य१)

पुरातत्त्व-प्रसङ्ग

इसमें द्विवेदी जी की पाण्डित्य पूर्ण लेखनी से लिखे गये पुरातत्त्व विषयक अनेक लेखों का संग्रह है। पुस्तक केवल सरस और मनोरञ्जक ही नहीं, ज्ञान वर्द्धक भी बहुत है। प्राचीन हिन्दुओं की समुद्र यात्रा, प्राचीन भारत में नाट्यशालाएँ, कम्बोडिया में प्राचीन हिन्दू राज्य, इत्यादि निबन्ध पढ़कर, पाठक अनेक ज्ञातव्य बातों से परिचित हो सकते हैं। मूल्य ॥=)

श्री मैथिलीशरण जी गुप्त लिखित

काव्य-ग्रन्थ ।

साकेत	३)	
यशोधरा	१॥)	
गुरुकुल	२)	
हिन्दू	१)	१।)
पञ्चवटी	।=)	
अनघ	।॥)	
स्वदेश-संगीत	।॥)	
त्रिपथगा	१॥)	
शक्ति	।)	
विकट भट	=)	
झङ्कार	॥=)	
भारत-भारती	१)	१॥)
जयद्रथ-वध	॥)	१)

प्रबन्धक,

साहित्य-सदन,

चिरगाँव (झाँसी)

श्रीसियारामशरणजी गुप्त लिखित।

आर्द्रा	१)
पाथेय	१)
दूर्वा-दल	॥=)
विषाद	।–)
आत्मोत्सर्ग	॥=)
मौर्य्य-विजय	।)
अनाथ	।)
पुण्य-पर्व (नाटक)	॥।)
मानुषी (कहानियाँ)	[illegible]
गोद (उपन्यास)	१।)
अंतिम-आकांक्षा (उप०)	१॥)

प्रबन्धक,

साहित्य-सदन,

चरगाँव (झाँसी)

आलोचना व निबन्ध

अन्यान्य-ग्रन्थ

मेघनाद-वध	३॥)
वीराङ्गना	१)
विरहिणी-व्रजाङ्गना	।)
पलासी का युद्ध	१॥)
गीता-रहस्य	२॥)
हेमलासत्ता	।-)
चित्राङ्गदा	।=)
मधुकरशाह	।)
रेणु	।-)
अंकुर	॥=)
स्वप्न वासवदत्ता	॥=)
शेलकश	॥=)
रेणुका	॥=)
सुनाल	॥=)

प्रबन्धक,
साहित्य-सदन,
चिरगाँव (झाँसी)